स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–20, अंक–12, मार्गशीर्ष–पौष 2069, दिसम्बर 2012

संपादक

विक्रम उपाध्याय

कार्यालय

धर्मक्षेत्र, सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम्, नयी
दिल्ली–110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011–26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली–32 से मुद्रित।

आवरण कथा–4

फुटकर व्यापार में, विदेशी पूंजी निवेश को अनुमति देने का निर्णय देश के 1.25 करोड़ फुटकर व्यापारियों करोड़ों किसानों, लघु, मध्यम व वृहद स्तरीय उद्योगों और परिवहन व्यवसायियों सहित अनेक वर्गों को गंभीर रूप से प्रभावित करेगा।

कवर पेज

अ नु क्र म

आवरण कथा

फुटकर व्यापार में विदेशी पूंजीः
समग्र आर्थिक क्षेत्र के लिए गंभीर चुनौती
– भगवती प्रकाश शर्मा /4

एफडीआई – चर्चा /11

पड़ताल

खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश : अतार्किक दावे
– स्वदेशी संवाद /13

कृषि

किसानों को बर्बाद करने की योजना
– देविन्दर शर्मा /17

लघु उद्योग

छोटे उद्योगों को समर्थन की दरकार
– जयंतीलाल भण्डारी /20

मुद्दा

बिजली संकट से निपटने की राह
– भारत डोगरा /23

समस्या

कसाब के बाद अब भी कई सवाल
– महेश परिमल /25

पर्यावरण

गर्म दुनिया में जीवन की कवायद
– निरंकार सिंह /27

अंतर्राष्ट्रीय

दोहा में कुछ हाथ न आया
– सुमन सहाय /29

विचार–विमर्श

ग्रामीण क्षेत्रों में पर्यटन केन्द्रो की स्थापना
– अरविन्द जैन /31

दृष्टिकोण

आम आदमी को कब मिलेगी सस्ती दवाईयाँ
– डॉ. अश्विनी महाजन /32

पाठकनामा/2, रपट/34

पाठकनामा

आम आदमी का जीना दूभर कर रही है वर्तमान सरकार

आज आम आदमी पर सरकार ने करों का भारी बोझ लाद दिया है और ऊपर से उसे मिलने वाली सब्सिडी को भी सरकार कम करती जा रही है। महंगाई और सब्सिडी कम करने से आम आदमी का कचूमर निकलने पर तुली है यूपीए सरकार। साल में छह सिलेंडर देने से आम आदमी को जीते जी सरकार ने मार दिया है। ऊपर से यह बेशर्म सरकार आम आदमी के नाम की ही दुहाई दे रही है। आज सीमित तनख्वाह वाला आम आदमी, जो एक पैसे और आयकर की चोरी नहीं कर सकता उसके तो सरकार सीने पर चढ़कर कर वसूल लेती है। लेकिन जो राजनेता, सरकारी अफसर, उद्योगति अपने काले धन को स्विस बैंक में छिपाकर रखता है उन पर सरकार मेहरबान है। आज बिजली, पानी को भी निजी कंपनियों के हाथ सौंपकर सरकार अपने कर्तव्य से भी विमुख हो रही है। साथ ही निजी कंपनियों को पानी और बिजली का बिल बढ़ाने को बढ़ावा दे रही है। अब अगर आम आदमी अपनी आवाज उठाए तो कहां पर उठाए जब सरकार ही आम आदमी का जीना दूभर कर रही है।

– राकेश कुमार पाण्डेय, गली नं. 9, करतार नगर, दिल्ली

दिन–प्रति–दिन सरकारी महकमों में बढ़ता भ्रष्टाचार

आज हमारा देश भ्रष्टाचार, महंगाई और गरीबी से काफी ग्रस्त है। जहां सरकार उल्टे सीधे नियम लाकर महंगाई कम करने पर जोर दे रही है वहीं दूसरी तरह सरकारी कर्मचारी भ्रष्टाचार करते ही जा रह है। कितनी आश्चर्यजनक बात है कि भ्रष्टाचार के खिलाफ देशव्यापी आंदोलन जिस दिल्ली शहर से शुरू हुआ आज वहीं के सरकारी महकमों का भ्रष्टाचार चरम सीमा पर है। बीते 11 माह के आंकड़ों से पता चलता है कि राष्ट्रीय राजधानी के स्लम इलाकों में रहने वाले लोग घूसखोरी से सबसे ज्यादा त्रस्त है। इन इलाकों में 500 रुपए से 7000 रुपए तक पुलिस वालों को रोजमर्रा कार्यों के लिए घूस दी जाती है। यह खुलासा सीएमएस इंडिया करप्शन स्टडी 2012 की रिपोर्ट में बताया गया है। वहीं दिल्ली की एमसीडी भी इसमें पीछे नहीं है। रिश्वत मांगने के निम्न कारण है : नक्शा का पास करना, निर्माण के ठेके, निर्माण कार्यों, बिल्डिंग का कंपलीशन सर्टिफिकेट देने में, अवैध निर्माण इत्यादि में पुलिस–एमसीडी रिश्वत मांगते है। मेरे हिसाब से इन दोनों महकमों से यह अधिकार छिन लेना चाहिए और यह सब कार्य क्षेत्रीय विधायक और वहां के नागरिकों की सहमति के द्वारा किया जाए तो भ्रष्टाचार पर काफी लगाम लग सकती है। **– डॉ. नेगी, संत नगर, दिल्ली**

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 011–26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 100 रुपए

आजीवन सदस्यता शुल्क: 1,000 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

(ध्यानार्थ : कृपया अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखें)

उन्होंने कहा

अगर रिटेल में एफडीआई से किसानों को फायदा होता तो यूरोप और अमेरिका के किसानों को मालामाल हो जाना चाहिए था। फिर वहां किसानों को हर रोज 6000 करोड़ की सब्सिडी क्यों मिलती है।

– अरुण जेटली

जो लोग एफडीआई लाने पर अड़े हैं, वे देश को तबाही की ओर ले जा रहे हैं। ऐसे लोग केवल अमीरों की खुशियों को ध्यान में रख रहे हैं और गरीब भारत की अनदेखी कर रहे हैं।

– शरद यादव

जब तक वालमार्ट को 2 और भारतीय व्यापारियों को लगभग 18 प्रतिशत ब्याज पर ऋण मिलता रहेगा, रिटेल में एफडीआई को इजाजत नहीं मिलनी चाहिए।

– सुब्रह्मण्यम स्वामी

वोट से चीजें तय होगी? भारत के लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा उसका क्या? अफसोस की बात है।

– शेखर कपूर

भारतीय उद्योग जगत में चीन को टक्कर देने का पूरा दमखम है, लेकिन सरकार का सहयोग न मिलने से वह पड़ोसी देश की तुलना में काफी पिछड़ा हुआ है।

– रतन टाटा

पुलिस को व्यवहार में तब्दीली लानी होगी। वक्त है जब सरकारों को जागना होगा, नहीं तो स्थिति इतनी बिगड़ जाएगी कि उसे संभालना बेहद मुश्किल होगा।

– जूलियो रिबेरो, पूर्वआईपीएस

संपादकीय

समाजवाद की आड़ में पूंजीवाद का पोषण

यूं तो समाजवाद और पूंजीवाद में छत्तीस का आकड़ा है। पर भारतीय राजनीति का मिजाज ऐसा बदला है कि समाजवादी अब पूंजीवाद की रक्षा का बीड़ा उठा रहे हैं। लोकसभा और राज्य सभा में कांग्रेस नेतृत्व वाली सरकार को खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश की मंजूरी पर पहले परोक्ष और फिर प्रत्यक्ष समर्थन देकर समाजवादी पार्टी ने भारत में क्रूर पूंजीवाद की जड़ जमाने के लिए जरूरी खाद पानी दे दिया है। यही नहीं दलित उत्थान की राजनीति करने वाली बहुजन समाज पार्टी पूंजीवाद पोषण में भी समाजवादी पार्टी को पीछे छोड़ने में कोई कसर नहीं छोड़ी। लोकसभा में वोटिंग से मुंह चुराने वाली पार्टी की मुखिया मायावती न जाने किस बात पर इतनी उत्साहित हुईं कि राज्य सभा में खुदरा व्यापार पर हुई बहस के बाद सरकार के पक्ष में वोटिंग का निर्णय कर डाला। समाजवाद और दलित उत्थान आंदोलन का यह रूप किसी को समझ नहीं आया। खास कर तब और जब दोनों दलों के नेतृत्व यह दावा करते हैं उनके सरकार में रहते उत्तरप्रदेश में विदेशी किराना का स्टोर नहीं खुलेगा। इन दोनों दलों ने अपनी घोषित नीतियों से उलट जाने की असली मजबूरी को छुपाने के लिए बेहद बचकाना तर्क का सहारा लिया। इन्हें गरीब जनता, भोले भाले किसानों और छोटे दुकानदारों की जिंदगी की कीमत पर भी कथित रूप से धर्मनिरपेक्षता की रक्षा करनी है। मुलायम और मायावती का तर्क है कि सरकार के निर्णय के खिलाफ वोट डालने से यह संदेश जाएगा कि वे भाजपा के साथ हैं और उनके अनुसार भाजपा के साथ खड़े होने से उनके उपर भी साम्प्रदायिकता का लेबल लगा जाएगा। इसलिए इन्होंने खुदरा व्यापार के क्षेत्र में विदेशी पूंजी निवेश का अपने भाषणों में विरोध करते हुए उनके लिए लाल कालीन बिछा रही कांग्रेस सरकार को समर्थन दिया। इतिहास साक्षी रहेगा कि इन दोनों पार्टियों के नेतृत्व ने अपनी निजी मजबूरियों के लिए कैसे पूरे कौंम को आग में झोक दिया। मुलायम सिंह ने लोक सभा में गांधी के स्वदेशी प्रेम का तो जिक्र किया, पर गांधी की छोटी सी बात भूल गए कि उन्होंने जनता के मुद्दे पर एक बार नहीं सैकड़ों बार अन्न जल तक का त्याग कर दिया। दलितों के उत्थान के नाम पर अकूत संपत्ति जोड़ने वाली मायावती के लिए देश और राज्य को बचाने से ज्यादा जरूरी था खुद को बचाना। समाजवाद और दलित उत्थान आंदोलन यह का भटकाव इस देश के लिए बहुत महंगा पड़ेगा। महंगा सिर्फ इस रूप में नहीं कि वालमार्ट और कैरीफोर जैसी बहुराष्ट्रीय कंपनियां देश के किराना व्यापार के ढांचे को तहस नहस कर देगी, बल्कि महंगा इस रूप में कि इससे देश में मुद्दों और सिद्धांतों की राजनीति पूरी तरह तिरोहित हो जाएगी। आर्थिक रूप से भारत को पंगु बनाने वाले कई विदेशी शक्तियों को अब यह विश्वास हो जाएगा कि भारत की राजनीतिक व्यवस्था को जब चाहे जैसे इस्तेमाल कर सकते हैं। उन्होंने भारत सरकार की बांह मरोड़ने का रास्ता मिल गया है। सरकार के पास अब यह आड़ नहीं रही कि वह अमरीका या अन्य आर्थिक महाशक्तियों के सामने घुटने टिकाने से पहले यह बहाना बना सके कि उसे संसद से मंजूरी लेनी पड़ेगी। अभी तक भारत दुनिया के सामने अपना बहादुर चेहरा इसी कारण पेश करता रहा कि उसके यहां कठपुतली सरकार नहीं होती। उसका लोकतंत्र बहुत मजबूत हैं जहां देश हित के खिलाफ काम करने की आजादी सरकार के पास नहीं होती। एक बार नहीं अनेक बार हमारी सरकार ने देश हित के खिलाफ बाहरी देशों को उन प्रस्तावों को यह कह कर लौटा दिया कि हमारा विपक्ष बहुत मजबूत है और वह कतई इसे लागू नहीं होने देगा। यही कारण है कि राष्ट्राध्यक्षों या उनके विशेष दूतों को आकर सरकार के साथ विपक्ष को भी विश्वास में लेने की आवश्यकता पड़ती थी। खुदरा व्यापार के मामले में भी अमरीकी प्रशासन हमारी सरकार के साथ–साथ विपक्ष के नेताओं से भी मान मनौव्वल करता रहा। ऐसा इसलिए हो पाता था कि बाहरी ताकतों को भी मालूम था कि किस मुद्दे पर किस राजनीतिक पार्टी की क्या नीति और सोंच है। पर खुदरा व्यापार पर कांग्रेस की चाल में फंस कर अपनी ही नीतियों और अपने सिद्धांतों का गला घोंट समाजवादी और बहुजन पार्टी ने भारतीय लोकतंत्र की कमजोरी को सबके सामने उजागर कर दिया। विरोध और समर्थन जैसे विपरीत अर्थ वाले शब्दों को मायने बदल दिए। इन दोनों नेताओं ने तो भारतीयता का भी अर्थ बदल डाला। मुलायम और मायावती दोनों कहते हैं कि खुदरा व्यापार में विदेशी पूंजी का आना देश के लिए खतरनाक है, पर दोनों उन्हें आने देने का मार्ग प्रशस्त करते हैं। दोनों के तर्क भी मजेदार हैं। मुलायम कहते हैं कि वालमार्ट को हम उत्तर प्रदेश में घुसने नहीं देगे। मायावती कहती हैं कि इस मामले में यह प्रावधान बड़ा अच्छा है कि जो राज्य चाहे लागू करें और जो न चाहे ना करें। क्या दोनों के लिए भारतीय हित सिर्फ उत्तरप्रदेश तक सीमित हैं। क्या दोनों यह मानते हैं कि जो उत्तरप्रदेश के लिए ठीक नहीं है वो अन्य राज्यों के लिए ठीक होगा। क्या वे यह भी मानते हैं कि देश पर हो रहे हमले के दौरान उनकी जिम्मेदारी सिर्फ उत्तरप्रदेश के बचाव तक है, या ये दोनों ये मानते हैं कि उनके भारत की सीमा सिर्फ उत्तरप्रदेश की सीमाओं तक है। ये हाल उन दो नेताओं की है जिनके समर्थक इन्हें देश के प्रधानमंत्री बनाने का सपना संजो रहे हैं अब आप ही फैसला करें कि इनकी सोंच संकुचित है या इनके निजी स्वार्थ असीमित।

फुटकर व्यापार में विदेशी पूंजीः समग्र आर्थिक क्षेत्र के लिये गंभीर चुनौती

विश्व में जहाँ भी वृहद स्तरीय फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं – यथा अमरीकी कम्पनी वालमार्ट, जर्मन कम्पनी मेट्रो ए.जी., टेस्को, केरीफॉर आदि जैसी कम्पनियों का विस्तार हुआ है, वहाँ पर लघु स्तरीय फुटकर व्यापार अर्थात् छोटे–छोटे व्यापारियों का कारोबार बड़े पैमाने पर समाप्त हुआ है। बहुसंख्य व्यापारी अपना व्यवसाय बन्द करने को विवश हुये हैं और फुटकर व्यापार का 70–80 प्रतिशत तक बहुत बड़ा हिस्सा, छोटे व्यापारियों से छिन कर बड़ी कम्पनियों के हाथों में गया है।

■ भगवती प्रकाश शर्मा

फुटकर व्यापार में, विदेशी पूंजी निवेश को अनुमति देने का निर्णय देश के 1.25 करोड़ फुटकर व्यापारियों करोड़ों किसानों, लघु, मध्यम व वृहद स्तरीय उद्योगों और परिवहन व्यवसायियों सहित अनेक वर्गों को गंभीर रूप से प्रभावित करेगा। देश के सभी प्रमुख वर्गों के लिये गंभीर दूरगामी दुष्प्रभाव रखने वाला यह निर्णय देश में रोजगार और सम्पूर्ण, आर्थिक, औद्योगिक व सामाजिक सरंचना सहित संस्कृति व पर्यावरण को भी गंभीर रूप से प्रभावित करेगा।

विद्यमान फुटकर व्यापार, व्यापारी व समाज पर प्रभाव

देश में वर्तमान में 1.25 करोड़ फुटकर व्यापारिक इकाईयाँ हैं। इन 1.25 करोड़ व्यापारिक इकाईयों में लगभग 4.0 करोड़ लोग रोजगार में संलग्न हैं। फुटकर व्यापार में संलग्न इन 4.0 करोड़ लोगों में से प्रत्येक व्यक्ति के परिवार में औसत 3–4 लोगों के होने की दशा में, फुटकर व्यापार में विदेशी निवेश का प्रतिकूल प्रभाव, प्रत्यक्ष रूप से फुटकर व्यापार पर अवलम्बित इन सभी 16 करोड़ लोगों पर होगा। फुटकर व्यापार के क्षेत्र में वर्तमान में देश में कुल 22.5 लाख करोड़ रूपयों का वार्षिक कारोबार होता है। इसमें, वर्तमान में लगभग 3 प्रतिशत अंश वृहद स्तरीय फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं (अर्थात् बड़े Shopping Mall वाली कंपनियों) का है। अन्यथा, फुटकर व्यापार के क्षेत्र में शेष लगभग 96–97 प्रतिशत कारोबार छोटे फुटकर व्यापारियों के द्वारा सम्पादित किया जाता है। यदि फुटकर व्यापार में विदेशी पूंजी निवेश के परिणाम स्वरूप आगामी 10–15 वर्षों में भी, यदि देश के फुटकर कारोबार का 40–50 प्रतिशत अंश यदि विदेशी कम्पनियों सहित विविध वृहद् स्तरीय फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं के हाथ में चला जायेगा तो, देश के फुटकर व्यापार पर अवलम्बित इन 16 करोड़ लोगों का योगक्षेम गंभीर रूप से प्रभावित होगा। इससे परिवार तनाव ग्रस्त होंगे। अपराध बढ़ेगे और समाज जीवन भी प्रभावित होगा।

विश्व में जहाँ भी वृहद स्तरीय फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं – यथा अमरीकी कम्पनी वालमार्ट, जर्मन कम्पनी मेट्रो ए जी, टेस्को, केरीफॉर आदि जैसी कम्पनियों का विस्तार हुआ है, वहाँ पर लघु स्तरीय फुटकर व्यापार अर्थात् छोटे–छोटे व्यापारियों का कारोबार बड़े पैमाने पर समाप्त हुआ है। बहुसंख्य व्यापारी अपना व्यवसाय बन्द करने को विवश हुये हैं और फुटकर व्यापार का 70–80 प्रतिशत तक बहुत बड़ा हिस्सा, छोटे व्यापारियों से छिन कर बड़ी कम्पनियों के हाथों में गया है।

इंग्लैण्ड के फुटकर किराना बाजार के 70 प्रतिशत पर केवल 5 सुपर बाजार कम्पनियों का अधिकार है। इंग्लैण्ड में काम्पीटीशन कमीशन के द्वारा 1999 में सम्पादित जाँच में उन्होंने कहा कि बड़ी श्रृंखलाओं द्वारा स्पर्धा समाप्त कर दिये जाने से उपभोक्ताओं के सम्मुख उपलब्ध विकल्प ही समाप्त होते चले गये हैं।

सस्ता बेचने के नाम पर इंग्लैण्ड में सुपर मार्केट दूध व ब्रेड जैसे उत्पाद घाटे में बेच कर उससे ग्राहकों को आकृष्ट करने का काम करते है। अन्य उत्पादों पर बहुत ऊंचा लाभ जोड़ते हैं, जिसकी आगे चर्चा की गयी है। ''फ्रेण्ड्स ऑफ अर्थ के एक अध्ययन के अनुसार इंग्लैण्ड में सुपर बाजार में फल व सब्जियों के दाम सामान्य से 30 प्रतिशत ऊंचे पाये गये।

स्थानीय छोटे व्यापारियों को समाप्त करने के लिये वालमार्ट जैसी बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाएँ पहले छोटे–छोटे स्थानों पर डिस्काउण्ट स्टोर, अर्थात् बड़ी छूट पर माल बेचने वाला भण्डार खोलती हैं। इन डिस्काउण्ट स्टोर्स पर सस्ते माल के चलते, छोटे–छोटे सभी फुटकर भण्डार जब बन्द हो जाते हैं, तब वालमार्ट भी कई डिस्काउण्ट स्टोर्स के स्थान पर (उन सबको बन्द करके) एक सुपर मार्केट खोल देती है। इसलिये बाद में लोगों को दूर–दूर जाकर माल खरीदना पड़ता है।

इस नीति से व्यापार करके ही अमेरिका मे साम वाल्टन (Sam Walton) द्वारा खोला वालमार्ट स्टोर आज विश्व की सबसे बड़ी फुटकर श्रृंखला बन गया। इसकी वार्षिक बिक्री 2011 में 421.85 अरब डालर (23 लाख 20 हजार करोड़ रूपये) की थी। विश्व 161 देशों का सकल घरेलू उत्पाद (GDP) इससे कम है। अर्थात् विश्व के 161 देशों की अर्थव्यवस्था से भी इसका कारोबार अधिक है। आज भी वालमार्ट कम्पनी एक पारिवारिक कम्पनी ही है, जिसकी 48 प्रतिशत अंश पूंजी पर वाल्टन परिवार का ही अधिकार है। 16 देशों में इसके 8500 भण्डार है। वर्ष 1992 में उसकी मृत्यु के समय साम वाल्टन अमेरिका का सर्वाधिक धनी व्यक्ति था। आज भी उसके वारिस बिल गेट्स के बाद दूसरे स्थान पर है।

विश्व की शीर्ष 10 बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं की संयुक्त बिक्री 1200 अरब डालर (66 लाख करोड़ रूपये) से अधिक है। वालमार्ट के बाद दूसरा स्थान कैरीफार का है, जिसका 16 देशों में कारोबार है और 120 अरब डालर से अधिक का कारोबार है, टेस्को का 94 अरब डालर का 14 देशों में व जर्मन कम्पनी मेट्रो ए.जी. का 90 अरब डालर का 33 देशों में कारोबार है। क्रोगर कम्पनी का 82 अरब डालर का, शवार्ज के 10,000 भण्डार 25 देशों में फैले हैं व 78 अरब डालर का उसका कारोबार है। कोस्टको का 78 अरब डालर, होम डिपार्टमेण्ट का 68 अरब डालर, टारगेट का 67 अरब डालर एवं एल्डी जी.एम.बी.एच. के 18 देशों में फैले 2500 भण्डारों का 58 अरब डालर का वार्षिक कारोबार हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय अनुभव

विश्व में जहाँ–जहाँ भी फुटकर व्यापार में बड़ी कम्पनियों के कारोबार का विस्तार हुआ है। वहाँ बड़ी संख्या में छोटे फुटकर व्यापारिक प्रतिष्ठान बन्द हुये हैं। इसके फलस्वरूप कई देशों में फुटकर व्यापार के कारोबार में बड़ी कम्पनियों का एक तरफा वर्चस्व बनता चला गया है। संयुक्त राज्य अमेरिका में आज 80 प्रतिशत फुटकर व्यापार ऐसी ही वृहद स्तरीय फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं के हाथ चला में गया है। यूरोप में 70 प्रतिशत फुटकर कारोबार ऐसी बड़ी कम्पनियों के हाथों में गया है। केवल 3 दशक पूर्व ही इंग्लैण्ड में अधिकांश फुटकर व्यापार एशियाई प्रवासियों के पास था। आज बड़ी संख्या में इन एशियाई प्रवासियों से छिनकर अधिकांश फुटकर कारोबार, बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं के पास चला गया है। कई एशियाई अब वहीं, ऐसी व हद स्तरीय फुटकर श्रृंखलाओं के मॉल में नौकरी कर अपना काम चला रहे हैं।

आज देश के करोड़ों किसानों, लाखों छोटे–बड़े उद्योगों एवं 120 करोड़ उपभोक्ताओं की आवश्यकताएँ 1.25 करोड़ फुटकर व्यापारी कर रहे हैं। इन सबके बीच परस्पर स्पर्द्धा से कोई किसी का उतना एक तरफा शोषण नहीं कर सकता, जैसा कुछ 10–15 बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं का देश के आधे से अधिक फुटकर कारोबार पर एकाधिकार जैसी स्थिति बन जाने से होगा।

दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में इन नव–उदारवादी आर्थिक नीतियों के, यूरो अमरीकी देशों की तुलना में विलम्ब से लागू होने पर भी फुटकर व्यापार के क्षेत्र में बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं के प्रवेश के फलस्वरूप आज मलेशिया, इण्डोनेशिया, थाईलैण्ड आदि देशों में भी 40 से 55 प्रतिशत तक फुटकर कारोबार बड़ी कम्पनियों के हाथों में गया है।

छोटे फुटकर भण्डारों की तुलना में सुपर बाजारों में बाहरी माल की अधिकता के कारण स्थानीय अर्थतंत्र सिकुड़ता चला जाता है। छोटे फुटकर भण्डारों पर इंग्लैण्ड में प्रति 10 पाउण्ड की बिक्री पर उस क्षेत्र की आर्थिक प्रगति में 25 पाउण्ड की आय कर सृजन होता है। लेकिन सुपर बाजारों पर प्रति 10 पाउण्ड की बिक्री से केवल 14 पाउण्ड की स्थानीय आय का सृजन होता है। ऐसा इंग्लैण्ड में 2001 में हुये एक अध्ययन में पाया गया। सुपर मार्केट के कारण आस–पास के अनेक बेकरियाँ, सब्जी विक्रेता, दवा भण्डार, चश्में की दुकानें, फोटो ग्राफर चौपट तक हो जाते हैं। ऐसा स्वयं इंग्लैण्ड के प्रतिस्पर्द्धा आयोग (competition commission) का निष्कर्ष है जो उनके 2000 के प्रतिवेदन के दूसरे खण्ड के गद्यांश 13.19 पर अंकित है।

ब्रिटिश रिटेल फॉरम के अनुसार इंग्लैण्ड में प्रत्येक एक सुपर बाजार के खुलने से औसत 276 नौकरियाँ समाप्त होने का रिकार्ड है।

छोटे व्यापारी के अस्तित्व पर संकट के कारण

प्रत्येक शापिंग मॉल के आस–पास की सारी की सारी दुकानें सबसे पहले बन्द होती हैं। लेकिन, शीघ्र ही उन पूरे के पूरे नगरों में जहाँ भी ये वृहद स्तरीय श्रृंखलायें प्रवेश करती है वहाँ छोटे व्यापारियों का व्यवसाय बहुत अधिक सीमा तक प्रभावित होता है। ऐसा होने के कई कारण हैं, इनमें से कुछ

का यहाँ विवेचन आवश्यक है।

जब बड़े–बड़े शापिंग मॉल की श्रृंखला चलाने वाली वालमार्ट, मेट्रो ए.जी जैसी ये बड़ी–बड़ी विदेशी कम्पनियाँ देश में आकर प्रत्येक 50 से 100 तक या और भी अधिक संख्या में शॉपिंग मॉल खोलेंगी। तब वे अपने ऐसे 50–100 तक शॉपिंग मॉल्स पर वर्ष भर होने वाली बिक्री के लिये बड़े उत्पादकों से पूरे वर्ष भर की खरीद के लिये सौदेबाजी करेंगी तो वे अधिकांश उत्पादकों से बहुत लम्बी अवधि की उधार एवं सामान्य से अधिक छूटे (Discounts) लेने में सफल हो जाती हैं। उदाहरण के लिये वालमार्ट जैसी किसी कम्पनी को देश (भारत) में पहले चरण में खोले जाने वाले अपने 50–100 तक शॉपिंग मॉल्स व अनेक अन्य देशों में चलने वाले मॉल्स के लिये करोड़ों रूपयों का माल यथा साबुन, डिटर्जेण्ट, वस्त्र, टी.वी., फ्रिज आदि की प्रति वर्ष खरीदी जाने वाली बड़ी मात्रा में खरीद की सौदेबाजी करेंगी तो वह बहुत लम्बी अवधि की उधार एवं आम थोक/फुटकर व्यापारी की तुलना में ऊंची व्यापारिक छूटें (trade discount) लेने में सफल होंगी। इस प्रकार लम्बी अवधि की उधार पर खरीदे माल को रोकड़ बेचने से उनके पास ग्राहकों या जनता का पैसा जमा होता चला जाता है। इस राशि को कहीं भी बैंक में, शेयर बाजार में या अन्यत्र निवेश (Invest) करने की दशा में ऐसी कम्पनियों को अपने निवेश पर इतनी आय (investment income) हो जाती है कि उन्हें वस्तु व्यापार में लाभ जोड़ने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती है। इसलिये प्रारंभिक दौर में वे अन्य व्यापारियों की तुलना में श्रृंखलाबद्ध शॉपिंग माल्स पर वस्तुएँ अपेक्षाकृत सस्ती बेचती हैं। प्रारंभिक दिनों में छोटे स्थानीय व्यापारियों को कारोबार बन्द करने के लिये बाध्य करने के लिये वे घाटा भी उठाती हैं। इसलिये अधिकांश क्रेता इस आरंभिक दौर में वस्तुयें सस्ती दर पर खरीदने के लिये अधिकांश खरीददारी इन शॉपिंग मॉल्स से ही करते हैं। केवल यदा–कदा अचानक जब दूर जाना सम्भव नहीं होता है तो किसी आपातकालीन आवश्यकता में जैसे अचानक टूथ पेस्ट समाप्त हो गया व तत्काल एक वस्तु के लिये मॉल पर जाना सम्भव नहीं हो, तब ही व्यक्ति पास के किराना स्टोर पर जाना पसन्द करेगा। इससे घटती बिक्री की दशा में छोटी–छोटी दुकानें बन्द होती जाती हैं। यही कारण है कि विश्व में सर्वत्र, जहाँ–जहाँ भी फुटकर व्यापार में श्रृंखलाबद्ध शॉपिंग मॉल्स वाली कम्पनियाँ फैली हैं वहाँ 80 प्रतिशत तक कारोबार उनके हाथों में गया है और छोटी–छोटी दुकानें बन्द हुयी हैं। जब किराणा, रेडीमेड, उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं आदि की छोटी फुटकर दुकानें बन्द होती जायेंगी, तब घटती स्पर्द्धा में ये शॉपिंग मॉल्स अपने दाम बढ़ाना प्रारम्भ कर देंगे। इसलिये सस्ती वस्तुओं का यह दौर अल्पकालिक ही रहता है। बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं के कारण अकेले इंग्लैण्ड में 1981 से 1999 के बीच छोटी फुटकर दुकानों की संख्या 56,862 से घटकर 25,800 रह गयी। वर्ष 1970 से 1988 के बीच पूरे यूरोप में वृहद स्तरीय फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं के विस्तार के कारण 4 लाख छोटी दुकानें बन्द हुयी हैं। छोटी फुटकर दुकानों को बन्द करवाने के लिये ये विदेशी कम्पनियाँ पहले छूट वाले भण्डार (Discount Stores) खोलती हैं। फिर जब छोटे निजी फुटकर भण्डार बन्द हो जाते हैं, तब ये कम्पनियाँ भी इन सभी छूट वाले भण्डारों (Discount Stores) को बन्द कर एक सुपर बाजार खोल देती हैं।

अमेरिका में 1951 से 2011 के बीच जनसंख्या 15 करोड़ से बढ़कर 31 करोड़ हो जाने के बाद भी फुटकर भण्डारों की संख्या 17.75 लाख से घटकर 15 लाख ही रह गयी कई यूरोपीय देशों यथा स्वीडन, स्विजरलैण्ड आदि में तो बड़ी फुटकर श्रृंखलाओं का, वहाँ के फुटकर व्यापार का 90 प्रतिशत तक हस्तगत कर लिया है। थाइलैण्ड में 15 वर्षों में वहाँ के फुटकर व्यापार के आधे से अधिक पर बड़ी श्रृंखलाओं का वर्चस्व स्थापित हुआ है। स्वीडन में तो 'आइ.सी.ए.' नामक अकेली श्रृंखला का वहाँ के किराणा व्यापार के 50 प्रतिशत व मैक्सिको में अकेली वालमार्ट का 47 प्रतिशत किराणा व्यापार पर अधिकार है।

देश के उद्योगों पर दुष्प्रभाव

वालमार्ट जैसी बड़ी कम्पनियाँ बड़ी मात्रा में अपना माल (उनके द्वारा बेची जाने वाली वस्तुएँ) चीन सहित अन्यान्य ऐसे देशों से मंगाती हैं जहाँ यह सामान उन्हें न्यूनतम मूल्य पर मिलेगा। विदेशी कम्पनियों व देश की कम्पनियों द्वारा चलाये जाने वाली वृहद स्तरीय फुटकर श्रृंखलाओं में विदेशी वस्तुओं की अधिकता के कारण देश में बड़ी संख्या में छोटे–बड़े उद्योग बन्द होंगे। इससे देश औद्योगिक उत्पादन के क्षेत्र में परावलम्बित होगा, विदेश व्यापार में घाटा बढ़ेगा और उस घाटे की पूर्त्ति हेतु और भी अन्य नये–नये आर्थिक क्षेत्रों में विदेशी निवेश खोलने को बाध्य होना पड़ेगा।

आज देश में बड़ी संख्या में लघु व मध्यम आकार के उद्योग हैं, जिनकी वस्तुएँ बड़ी मात्रा में स्थानीय थोक व फुटकर व्यापारिक प्रतिष्ठानों द्वारा बेची जाती है। जब देश के फुटकर व्यापार का एक बड़ा अंश वृहद स्तरीय फुटकर श्रृंखलाओं द्वारा हथिया लिया जायेगा तो वे बड़े पैमाने पर वस्तुएँ कुछ ही बड़े उद्योगों से खरीद कर उनका व्यापार करेंगे। इससे बड़ी संख्या में छोटे व मध्यम आकार के व अनेक बड़े उद्योग भी बन्द होंगे।

जिन कुछ चुने हुये बड़े उद्योगों के उत्पाद इन बड़ी कम्पनियों द्वारा क्रय किया जायेगा, उनसे भी वे अपनी शर्तों के अधीन ही क्रय करेंगे। इससे देश के अधिकांश उद्योग 5–7 बड़ी (विदेशी) व्यापारिक कम्पनियों के निर्देशानुसार ही कार्य करने को बाध्य होंगे। एक प्रकार से देश के प्रमुख उपभोक्ता उद्योग इन कम्पनियों की शर्तों पर उत्पादन के लिये अनुबन्धित हो जायेंगे।

अमेरिका का ही जूता उद्योग, इसलिये चौपट हो गया क्योंकि विगत दशकों में वहाँ की फुटकर श्रृंखलाओं ने जूते विकासशील देशों के उत्पादकों से बनवाने प्रारंभ कर दिये। इंग्लैण्ड में कॉट्स वियेला को अपना वस्त्रोत्पादन उद्योग केवल इसलिये बन्द करके 14,000 कार्मिकों की छुट्टी करनी

पड़ी, क्योंकि 'मार्क एण्ड स्पेन्सर' ने वस्त्र दक्षिण पूर्व एशिया से क्रय करने प्रारम्भ कर लिये। बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं द्वारा भारत में बड़ी मात्रा में चीनी माल लाने की दशा के लाखों छोटे–बड़े उद्योग चौपट होंगे। अनेक उद्योग संकुल (Industry Cluster) समाप्त होंगे।

इस सम्बन्ध में यह तर्क दिया जा रहा है कि फुटकर व्यापार में विदेशी निवेश खोलने सम्बन्धी अधिसूचना के अनुसार 30 प्रतिशत वस्तुएँ स्थानीय व छोटे उद्योगों से ही खरीदना आवश्यक होगा। इससे इन शॉपिंग मॉल्स में सारे उत्पाद विदेशी न होकर 30 प्रतिशत उत्पाद अनिवार्यतः स्थानीय होंगे। वस्तुतः स्थानीयता शर्त की पालनार्थ क्रय किये जाने वाले उन 30 प्रतिशत उत्पादों में अधिकांश उत्पाद देश में कार्यरत विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के उत्पाद होंगे यथा कोका–कोला, पेप्सी, पेप्सी के खाद्य उत्पाद, केलॉग के तैयार खाद्य (Readymade foods) हिन्दुस्तान लीवर, कोलगेट आदि जैसी कम्पनियों के उत्पाद। लघु व मध्यम उद्योगों के नाम पर वे हाथ करघा (हैण्डलूम) हस्तशिल्प (हैण्डी क्राफ्ट) आदि की वस्तुएँ क्रय करके ब्रॉंच ट्रॉंसफर के माध्यम से अपने देश–बाह्य स्टोर्स के लिये भेज देंगी, तब भी काम चल जायेगा। दूसरा उन्हें 70 प्रतिशत माल तो फिर भी विदेशी मूल का बेचने का अधिकार मिल ही गया है।

आज उद्योगों के माल के असंख्य थोक व फुटकर व्यापारीगण क्रेता हैं। एक व्यापारी द्वारा उचित कीमत नहीं देने पर के दूसरे को माल बेच सकते हैं। बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं की दशा सारे उद्योगों के माल के क्रेता गिनी–चुनी बड़ी कम्पनियाँ ही रह जायेंगी। ऐसी दशा में सीमित क्रेता कम्पनियाँ रह जाने से वे बड़ी कम्पनियाँ सब उद्योगों को अपनी (उन कम्पनियों की) शर्तों पर माल बेचने को बाध्य करेंगी साथ ही वे कुछ औद्योगिक इकाईयों में ही अपने आर्डर बाँट देंगे इससे बड़ी संख्या में उद्योग बन्द होंगे और जो बचेंगे वे भी इन बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं की बन्धक जैसी स्थिति में आ जायेगी। इसके अतिरिक्त जो माल वे विदेशों से लायेंगी वे उद्योग पूरी तरह चौपट हो जायेंगे।

जिन उद्योगों का माल लेंगी उनको अत्यन्त अल्प मूल्य भुगतान करेंगी उनका एकाधिकार स्थापित हो जाने पर उपभोक्ता से ऊँचे दाम वसूलेंगी। सामान्य रूप से, एक बार उनका आंशिक एकाधिकार होने पर वे जो उच्च लाभार्जन करना प्रारंभ कर देती हैं। उसके कारण, भारत की तुलना में उनके खर्च व लाभ का जोड़ जिसे चेनल मार्क–अप (Mark-up) कहते हैं 2 से 3 गुना होता है अर्थात् अपने क्रय मूल्य में व भारतीय व्यापारी की तुलना में 2–3 गुना मार्जिन जोड़ती हैं। उपभोक्ता उत्पादों में भारत में औसत चैनल मार्क–अप 24 प्रतिशत रहता है। यूरो अमरीकी देशों मे यह 40 प्रतिशत तक रहता है। तैयार ब्राण्डेड वस्त्रों व औषधियों में भारत में विक्रेता का मार्क–अप 35 प्रतिशत होता है, यूरो–अमरीकी देशों में यह क्रय लागत का 90 से 100 प्रतिशत तक होता है। इसलिये एक बार फुटकर श्रृंखलाओं का एकाधिकार होने के बाद वे उच्च मार्क–अप जोड़ती हैं। वस्त्रों में वुटिक डेनिम जीन्स पर 350 प्रतिशत तक का मार्क–अप तक रहता है। Kohl's व J.C. Penney का जीन्स पर लगभग 115 प्रतिशत तक का मार्क–अप (उसकी खरीद लागत व बिक्री मूल्य में अन्तर) पाया जाता है। जूतों में 100–500 प्रतिशत अर्थात् क्रय लागत की तुलना में बिक्री मूल्य दो से 6 गुना तक हाता है। केवल किराणा में ग्राहक को आकर्षित करने की दृष्टि से अल्प मार्क अप 5–25 प्रतिशत तक ही रहता है। सौन्दर्य प्रसाधनों में 60–80 प्रतिशत। औषधियों में तो, एल्को–डेट्राइट ए.बी.सी. से सम्बद्ध WXYZ-TV के अनुसार 200 से 5600 प्रतिशत तक मार्क–अप (अर्थात् लागत से दुगुने से 56 गुना तक लाभ जोड़ने) की वृत्ति अमेरिका में देखी गयी है। चश्मों में 800 से 1000 प्रतिशत मार्क–अप लागत के (आठ से गुना लाभ जोड़ने) की वृत्ति यूरो अमेरीकी देशों में बड़ी श्रृंखलाओं में देखी गयी है। इस प्रकार कुछ वस्तुओं को हानि में बेच कर ग्राहकों का आकृष्ट करके शेष वस्तुओं में प्रीमियम मूल्य लेकर उस कसर को पूरा करके भी स्पर्द्धा समाप्त करने में उन्हें सफलता मिल जाती है। दैनिन्दिन उपयोग के दूध, ब्रेड आदि को हानि पर बेच कर अन्य वस्तुओं पर ऊँचा लाभ अर्जित करती हैं।

इंग्लैण्ड के प्रतिस्पर्द्धा आयोग ने (Competition Commission) ऐसी 52 फूट युक्तियाँ सूची बद्ध की हैं। जिनका उपयोग कर वे उनको आपूर्त्ति करने वाले औद्योगिक व कृषि उपज के आपूर्त्तिकर्त्ताओं का शोषण करते हैं।

कृषि व किसानों पर प्रभाव

देश के फुटकर व्यापार पर जब बड़ी फुटकर व्यापारिक श्रृंखला युक्त कम्पनियों का बड़ी मात्रा में अधिकार हो जायेगा तो फिर देश के करोड़ों किसान भी अपनी उपज की बिक्री के लिये 5 से 7 बड़ी कम्पनियों पर अवलम्बित हो जायेंगे। ये कम्पनियाँ पूरे देश में उनकी सारी श्रृंखलाबद्ध दुकानों पर समरूप गुणवत्ता वाले कृषि उत्पाद उपलब्ध हो, इस हेतु वे अपने बीज देकर किसानों से ठेके पर ही खेती (Contract Farming) करवाना पसन्द करेंगे। वर्तमान में भी अनेक बड़ी कम्पनियाँ अपने–अपने ब्राण्ड के आटे के लिये गेहूँ, आलू, चिप्स के लिये आलू, टमाटर के सॉस (केचप) के लिये टमाटर, सोया आहार हेतु सोयाबीन, आदि की खेती ठेके पर (on Contract Farming) करवा रही हैं। देश का फुटकर व्यापार बड़ी कम्पनियों के हाथ में जाने के बाद देश के बहुसंख्य किसान स्वतंत्र न रह कर, बड़ी फुटकर व्यापारिक कम्पनियों के लिये ठेके पर खेती करने को बाध्य हो सकते हैं। यदि ऐसा हुआ तो किसान भू–स्वामी से मात्र बटाईदार (Land owner से Share Cropper) में बदल जायेंगे। एक बार यदि किसान बीज व अन्य सामग्री व सहायता के बदले एक बार किसी बड़ी फुटकर व्यापार कम्पनी के लिये खेती करने के लिये अपनी भूमि अनुबन्धित कर लेंगे तो उसके बाद ये कम्पनियाँ उन किसानों को, अनुबन्ध की अवधि समाप्ति के बाद भी न्यायालयों में विवादों में उलझा कर लम्बी अवधि तक उन्हें, उनके लिये खेती के

लिये उलझाये रखने में भी सफल हो जायेंगी।

ऐसी बड़ी कम्पनियाँ देश की अलग–अलग पंचायतों व प्रखण्डों में अलग–अलग फसलों का आवंटन कर लेंगी, तब वे जिस प्रखण्ड के किसानों को जिस फसल के लिये अनुबन्धित करेंगी वहाँ के किसान उसी फसल की खेती के लिये बाध्य होंगे। इससे किसान व देश की कृषि सम्प्रभुता भी प्रभावित होगी। इन विदेशी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं द्वारा विदेशी अनाज (जैसी केलिफोनियाई चावल आदि) फल व सब्जियाँ भी इन दुकानों पर इतनी बड़ी मात्रा में उपलब्ध कराये जायेंगे कि उपभोक्ताओं का एक बड़ा वर्ग उनकी और आकृष्ट होगा।

सभी प्रकार की विदेशी वस्तुओं की इतनी वेराइटी इन बड़ी श्रृंखलाओं पर होंगी कि सामान्य से सामान्य क्रेता भी इनके पास ही जायेगा। कुछ आम वस्तुएँ वे लागत से भी अल्प मूल्य पर बेचने का इतना प्रचार करेंगी कि अधिकांश ग्राहक वहाँ खिंचे चले जायेंगे। इससे स्थानीय उद्योगों के माल के क्रेता छोटे–छोटे थोक व फुटकर व्यापारी घटते चले जायेंगे।

यह भी एक भ्रम ही है कि ये बड़ी विदेशी कम्पनियाँ किसान को बेहतर कीमत देंगी। उनकी संचालकीय लागतें अत्यन्त ऊंची होने व अधिकांश किसानों की उपज खरीदने में कुछ ही बड़ी कम्पनियों का एकाधिकार हो जाने से वे किसान को बहुत अल्प मूल्य प्रदान करेंगी। अमेरिका में ही वहाँ सुपर बाजारों में उपभोक्ता के प्रत्येक डालर के व्यय में किसान को 1951 में 40 सेण्ट प्राप्त होते थे। वहीं आज उन्हें 19–22 सेण्ट ही मिलते हैं। फल, सब्जियाँ व अन्य खाद्य पदार्थ जल्दी नष्ट होने वाले होने से इन कम्पनियों की अवशीतन (Refrigeration) भण्डारण व परिवहन (Refrigerated Vans में परिवहन) की लागतें अधिक होती हैं। इसलिये किसानों को ये अति अल्प व न्यूनतम मूल्य ही चुकाती है। इसीलिये यूरो–अमेरिकी सरकारों को उनके यहाँ किसानों को उच्च अनुदान देना पड़ता है। अमेरिकी सरकार की इस हेतु (2008 में अगले 5 वर्षों के लिये) 370 अरब डालर का खेती को समर्थन का विधेयक पारित करना पड़ा है।

हाल ही में 30 अक्टुबर, 2012 को इजरायल के फार्मर्स यूनिअन के अध्यक्ष डॉब अमिताई ने वक्तव्य जारी कर फुटकर श्रृंखलाओं द्वारा कृषि उपज विशेष कर फल व सब्जियों में किसानों को बाजार भाव का 1/3 मूल्य ही देने का आरोप लगाया है। अमिताई का आरोप है कि फुटकर श्रृंखलाएँ ग्रीन बीन्स किसानों से 8 NIS प्रति किलो खरीद कर 25 से 27 NIS प्रति किलो बेच रही हैं। इजरायल की मुद्रा NIS (New Israeli Shekel) कहलाती है। जो लगभग 4 NIS = 1 अमरीकी डालर के तुल्य है। शुगर एप्पल्स (Annona Squamosa) किसानों से 9 NIS में क्रय करके 25 NIS में, स्क्वेश 2 NIS में क्रय करके 8 NIS शकरकन्द (Sweet Potato) 3 NIS में खरीद 11 NIS में बेच रही है। उनका आरोप है कि इजरायल में ये फुटकर खाद्य श्रृंखलाएँ जून 2012 में केले पर 154 प्रतिशत व (शिमला मिर्च तुल्य मिर्च) पर 90 प्रतिशत लाभ वसूली कर रही थी। फल व सब्जियों में बढ़ती मुनाफा वसूली के कारण पोषण के स्तर पर मई 2012 की State Comptroller Report में चिन्ता व्यक्त की गयी है, ऐसा भी डॉव अमिताई का कथन इस वक्तव्य में उन्होंने 30 अक्टुबर, 2012 को प्रसारित किया है।

इंग्लैण्ड की नेशनल फार्मर्स यूनियन (NFU) ने सितम्बर 2012 में किये एक सर्वेक्षण में पाया कि एक ग्राहक की एक खाद्य टोकरी (Basket of Food) जिसमें दूध, ब्रेड, अण्डे, मांस, टमाटर व सेब के संयुक्त रूप से खरीदने पर जिसके वह 37 पाउण्ड चुकाता था, उसके उत्पादक किसानों की जेब में केवल 11 पाउण्ड ही जाते थे। अर्थात् किसान की जिस उपज का उपभोक्ता 37 पाउण्ड चुकाता है उसके 1/3 से भी कम केवल 10 पाउण्ड ही किसान को मिलता रहा है। इस प्रकार यह आश्वासन एक छलावा ही सिद्ध होगा कि, फुटकर व्यापार में विदेशी निवेश से किसानों को बेहतर कीमत मिलेगी। मार्च 2001 में इंग्लैण्ड के पूर्व प्रधानमंत्री टोनी ब्लेअर तक ने किसानों को सुपर बाजार श्रृंखलाओं के चुंगुल से मुक्त करने की आवश्यकता पर बल दिया था।

आज हमारे देश के पास विश्व की सर्वाधिक, लगभग 16.5 करोड़ हेक्टर कृषि योग्य भूमि व सर्वाधिक 5.7 करोड़ सिंचित कृषि भूमि है। देश में वर्षा का जो जल बह कर समुद्र में जा रहा है, उसका समुचित उपयोग करके देश की समग्र 16.5 करोड़ हैक्टर कृषि योग्य भूमि को सिंचित किया जा सकता है। यदि देश की सारी 16.5 करोड़ हेक्टर भूमि सिंचित हो जाती है, तो देश की कृषि से विश्व के 400 करोड़ लोगों की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्त्ति की जा सकती है और भारत विश्व की खाद्य शक्ति बन सकता हैं। यदि फुटकर व्यापार में विदेशी पूंजी को प्रवेश व विदेशी फुटकर व्यापार कम्पनियों द्वारा किसानों की भूमि को ठेके पर कृषि के लिये अनुबन्धित कर उनकी भूमि पर परोक्ष अधिपत्य कर लिया तो देश की इस कृषि सामर्थ्य पर भी बड़ी विदेशी कम्पनियों का वर्चस्व स्थापित हो जायेगा। एक बार किसान द्वारा अपनी जमीन ठेके पर खेती के लिये किसी बड़ी कम्पनी के पास, उस कम्पनी द्वारा तैयार अनुबन्ध–पत्र पर हस्ताक्षर कर अनुबन्धित करा ली जाती हैं। उसके बाद उसके लिये अपनी जमीन को मुक्त करा लेना भी आसान नहीं रह जाती हैं। अमेरिका में 80 प्रतिशत छोटी कृषि जोतें ही समाप्त हो गयी। ऐसा होने में एक प्रमुख कारण बड़ी फुटकर श्रृंखलाओं की थोक क्रय अनुबन्ध (Bulk Buying Contracts) भी है।

मध्यप्रदेश में एक अमरीकी कम्पनी, उसके ब्राण्ड के आटे के लिये 6000 हेक्टर जमीन ठेके पर लेकर अपना गेहूँ का बीज देकर खेती करवा रही है। उस गेहूँ की पिसाई हेतु उसने 300 टन क्षमता का विशाल आटा मिल स्थापित कर अपने विज्ञापन के बल पर अपना आटा बेच रही है। इस प्रकार कई कम्पनियाँ खेत खलिहान से रसोई घर तक की खाद्य आपूर्त्ति श्रृंखला (food supply chain from farm land to kitchen) को ही अधिग्रहीत करती जा रही हैं। इस प्रकार विविध उत्पादों यथा आटा, तैयार खाद्य आदि के लिये खेत खलिहान

से किचन तक की खाद्य आपूर्त्ति श्रृंखला लेने के क्रम में जो विशाल उत्पादक–उद्योग जिन कुछ कम्पनियों द्वारा अभी भी लगाये जा रहे है और बड़ी बहुराष्ट्रीय फुटकर व्यापार कम्पनियों द्वारा जिस पैमाने पर लगाये जायेंगे उनसे देश के अधिकांश लघु उद्योग चौपट हो जायेंगे। उदाहरणतः अब तक लोग गेहूँ खरीद कर पास की चक्की पर आटा पिसा कर उपयोग में लेते थे, या लघु उद्योगों के रूप में छोटी–छोटी रोलर फ्लोर मिलें आटा तैयार करती थी। उनके स्थान पर अब 300–3000 टन तक क्षमता वाली बड़ी विदेशी कम्पनियों की विशाल आटा मिलें आ जायेंगी। अभी तक देश में तीसरे स्थान पर सर्वाधिक लघु उद्योग आटा चक्कीयाँ गिनी जाती रही हैं। अब धीरे–धीरे इनका और खाद्य क्षेत्र में कार्यरत हजारों–हजार लघु उद्योग चौपट होने ही हैं। फुटकर व्यापार में विदेशी निवेश के आने के परिणाम स्वरूप अनेक आर्थिक क्षेत्र/रोजगार क्षेत्र/उद्योगों के संकुल बड़े पैमाने पर विलोपित होंगे। इस दृष्टि से ट्रांसपोर्ट व्यवसाय की चर्चा यहाँ और कर लेना आवश्यक है।

छोटे ट्रांसपोर्ट व्यवसायी आदि पर प्रभाव

वर्तमान में करोड़ों किसानों, अनगिनत थोक व फुटकर व्यापारियों एवं लघु मध्यम व बड़े उद्योगों को, देश के कई लाख ट्रांसपोर्ट व्यवसायी छोटे–छोटे मालवाही टैम्पों, टाटा एस, टाटा 407 से लेकर बड़े ट्रकों से माल परिवहन की सेवाएँ देते हैं। जब फुटकर व्यापार बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं द्वारा ले लिया जायेगा तो उनका आपूर्त्ति श्रृंखला प्रबन्धन (Supply Chain Management) का काम वे गिनी चुनी बड़ी कम्पनियों को सौप देंगे। एक–एक बड़ी श्रृंखलाबद्ध फुटकर दुकानों का संचालन करने वाली इन कम्पनियों का उनके समग्र कृषि व औद्योगिक उत्पादों व आयातित सामानों के परिवहन का सारा काम, अति वृहद स्तर पर, संगठित रूप से परिवहन करने का काम किसी एक या दो बड़ी कम्पनियों को दे दिया जायेगा। वे कम्पनियाँ अपने मालवाही वाहनों के विशाल बेड़े के माध्यम से अनुबन्ध पर 'आपूर्त्ति–श्रृंखला सम्बन्धी सेवाएँ' (Supply Chain Services) देंगी? जब छोटे–छोटे माल परिवहनकर्त्ता व्यावसायियों को काम देने वाले छोटे व्यापारी विलोपित हो जायेंगे, बहुसंख्य किसानों का माल, उनकी क्रेता ऐसी बड़ी फुटकर व्यापार कम्पनियों के आपूर्त्ति श्रृंखला समाधान प्रदात्ता (Supply Chain Solution Providers) बड़ी परिवहन कम्पनियाँ करेंगी। तब छोटे–छोटे माल परिवहन व्यवसायी भी बड़ी संख्या चौपट होंगे। आज कोई भी बेरोजगार व्यक्ति छोटा–बड़ा ऐसा ट्रांसपोर्ट व्यवसाय प्रारम्भ कर अपने योगक्षेम की व्यवस्था कर लेता है। फुटकर व्यापार में विदेशी निवेश से यह रोजगार क्षेत्र भी प्रभावित होने की पूरी सम्भावना है।

व्यापक बेरोजगारी का संकट

सरकार के द्वारा यह कहा जा रहा है कि, फुटकर व्यापार में विदेशी पूंजी के आमंत्रण से देश में रोजगार के अवसर तेजी से बढ़ेंगे। बड़ी फुटकर व्यापार कम्पनियों द्वारा प्रचुर मात्रा में रोजगार दिया जायेगा। रोजगार वृद्धि के ये कथन सर्वथा निराधार है। भारत में फुटकर व्यापार के क्षेत्र में कुल 22.5 लाख करोड़ रूपयों का कारोबार हैं, उसमें आज 4 करोड़ लोग नियोजित हैं।

विश्व की सबसे बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखला संचालन करने वाली अमरीकी कम्पनी वालमार्ट का वार्षिक कारोबार भी 400 अरब डालर अर्थात् कुल 22 लाख करोड़ रूपये तुल्य ही हैं। भारत के सकल फुटकर व्यापार जितना कारोबार कर रही इस कम्पनी ने पूरे विश्व में मात्र 21 लाख लोगों को रोजगार दिया हुआ है। इस प्रकार वर्तमान लघु स्तरीय फुटकर व्यापार के अन्तर्गत औसत प्रति 5.5 लाख रूपये के वार्षिक कारोबार पर एक व्यक्ति को रोजगार मिल रहा है। जबकि वालमार्ट के व्यावसायिक प्रतिरूप (Business Model) में प्रति 2 करोड़ रूपयों के कारोबार पर औसत 1 रोजगार मिल का सृजन होता है। यदि आगामी 15–20 वर्षों में देश का 50 प्रतिशत फुटकर कारोबार वृहद स्तरीय फुटकर श्रृंखलाओं ने अधिग्रहीत कर लिया तो कम से कम 2 करोड़ लोगों का रोजगार प्रभावित होगा।

इसी प्रकार मेट्रो ए.जी. उसके 90 अरब डालर (4 लाख 90 हजार करोड़ रूपये) के कारोबार पर 2,83,000 लोगों को क्रोगर 90 अरब डालर पर 3,39,000 लोगों को कोस्टको 88 अरब डालर पर 1,47,000 लोगों को (अर्थात् प्रति 3.2 करोड़ रूपये के कारोबार पर एक व्यक्ति को) रोजगार दे रही है। होम डिपार्टमेण्ट 68 अरब डालर पर 3,21,000 व टार्गेट नामक फुटकर व्यापार श्रृंखला 67.38 अरब डालर के व्यापार पर मात्र 3,65,000 लोगों को रोजगार दे पा रही हैं। इस प्रकार विश्व की शीर्ष 10 फुटकर व्यापार श्रृंखलाएँ उनके प्रति 1 करोड़ से 3.2 करोड़ रूपये के वार्षिक कारोबार पर एक व्यक्ति को रोजगार देती हैं। जब भारत के विकेन्द्रित फुटकर कारोबार में प्रति 5.5 लाख रूपये के वार्षिक कारोबार पर एक व्यक्ति को रोजगार मिलता है।

आज देश के करोड़ों किसानों, लाखों छोटे–बड़े उद्योगों एवं 120 करोड़ उपभोक्ताओं की आवश्यकताएँ 1.25 करोड़ फुटकर व्यापारी कर रहे हैं। इन सबके बीच परस्पर स्पर्द्धा से कोई किसी का उतना एक तरफा शोषण नहीं कर सकता, जैसा कुछ 10–15 बड़ी फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं का देश के आधे से अधिक फुटकर कारोबार पर एकाधिकार जैसी स्थिति बन जाने से होगा।

पर्यावरण पर दुष्प्रभाव – सुपर बाजारों के खुलने से बस्तियों की छोटी–छोटी दुकानें बन्द होने पर लोगों को सामान खरीदने दूर–दूर जाना पड़ता है। इससे वाहनों में ईधन जलने से प्रदूषण बढ़ता है। बड़े–बड़े सुपर बाजारों की दूर–दूर से केन्द्रीय खरीद और Just in time क्रय नीति से परिवहन की आवश्यकता बढ़ जाती है। इंग्लैण्ड की इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रोसेरी डिस्ट्रीब्यूशन के अनुसार वर्ष 2002 में टेस्को के वाहनों का कुल 22.4 करोड़ किमी., सेन्सबरी का 11.57 करोड़ किमी. व आस्दा वालमार्ट का 14.79 किमी. का परिचालन हुआ।

इसके अतिरिक्त बड़ी फुटकर श्रृंखलाओं को उनके यहाँ बेचे जोने वाली फल–सब्जियों को रूप रंग अच्छा रहे व लम्बे समय तक खराब न हो (Shelf life लम्बी रहे), इसके लिये किसानों को कीटनाशकों का उच्च मात्रा में प्रयोग करना पड़ता है। इसे वे खाद्य भी उच्च कीटनाशी अवशिष्टों (Pesticidal Residues) के कारण स्वास्थ्य के लिये नुकसान देह हो जाते हैं। इससे मिट्टी व जल का प्रदूषण भी बढ़ता है। इस बात को 'फ्रेण्ड्स ऑफ अर्थ' के एक सर्वेक्षण में सेब उगाने वाले किसानों ने भी स्वीकार किया है।

1998 से 2001 के बीच सरकार ने भी जाँच में पाया कि सुपर बाजारों के 46 प्रतिशत सेव (Apples) में कीटनाशी अवशिष्ट (Pesiticidal Residue) पाये गये इनमें 18 प्रतिशत सेवों में एक से अधिक कीटनाशियों के अवशेष पाये गये। इसका 'फ्रेण्ड्स ऑफ अर्थ' नामक NGO के प्रतिवेदन The pesticides in our food में विस्तार से सन्दर्भ देखा जा सकता हैं।

अंत में

इस प्रकार निष्कर्ष रूप से फुटकर व्यापार में विदेशी पूंजी निवेश के फलस्वरूप देश में विद्यमान 1.25 करोड़ फुटकर व्यापारी, उस क्षेत्र में रोजगार में लगे 4.00 करोड़ व्यक्ति एवं इनके परिवारों के 16 करोड़ लोगों पर गम्भीर दुष्प्रभाव होगा। देश के किसान व कृषि, अनेक उद्योगपति व कई उद्योग क्षेत्र एवं परिवहन सहित अनेक अन्य रोजगार क्षेत्र व उनमें लगे लोग तो गंभीर रूप से प्रभावित होंगे यह उपरोक्त विवेचन से स्पश्ट ही हो गया है।

देश का 22.5 लाख करोड़ के कारोबार वाले फुटकर कारोबार का विशाल आर्थिक क्षेत्र एवं रोजगार का यह वृहद आधार रूपी तंत्र विदेशी कम्पनियों के हाथ में जाने से देश की अर्थव्यवस्था और गंभीर कुसमायोजन का शिकार होगी इस पर भी कुछ विचार यहाँ आवश्यक हैं। विगत 21 वर्षों में सुधारों के नाम से अपनायी नव उदारवादी आर्थिक नीतियों के कारण देश के 2/3 उत्पादक उद्योग तो विदेशी नियंत्रण में जा ही चुके हैं। ऐसे में यदि देश का व्यापारिक तंत्र भी विदेशी नियंत्रण में चला गया तो प्रश्न यह उठता है कि इस देश के अर्थतंत्र पर किसका स्वत्व होगा? हमारा या विदेशी कम्पनियों का?

देश के अर्थतंत्र पर बढ़ते विदेशी स्वामित्व का नियंत्रण के कारण देश के विदेश व्यापार में घाटा बढ़ता ही जायेगा। उससे उपजने वाले विदेशी मुद्रा संकट से उबरने के लिये सरकार एक–एक कर बचे आर्थिक क्षेत्रों यथा शिक्षा, चिकित्सा, जल प्रदाय बीमा, बैंक, पेंशन, संचार, जन संचार आदि को विदेशी स्वामित्व व नियंत्रण में सौंपने को बाध्य होती चली जायेगी। देश के अर्थतंत्र पर विदेशी कम्पनियों के वर्चस्व के फलस्वरूप देश के राजनीतिक निर्णय भी वे अकेले ही प्रभावित करने की स्थिति प्राप्त कर लेंगी।

देश का व्यापारिक तंत्र भी विदेशी नियंत्रण में चला गया तो प्रश्न यह उठता है कि इस देश के अर्थतंत्र पर किसका स्वत्व होगा? हमारा या विदेशी कम्पनियों का? देश के अर्थतंत्र पर बढ़ते विदेशी स्वामित्व का नियंत्रण के कारण देश के विदेश व्यापार में घाटा बढ़ता ही जायेगा।

विदेशी कम्पनियाँ देश के कानूनों में भी इनके अनुरूप जैसे चाहे परिवतन करा लेती हैं। कृषि उत्पाद विपणन सहकारिता अधिनियम (APMC Act) इसका उदाहरण है।

हमारे देश में सभी राज्यों में एक APMC कानून बना हुआ हैं। एग्रीकल्चर प्राड्यूस मार्केटिंग एक्ट में यह प्रावधान था कि किसी भी प्रकार की कृषि उपज केवल कृषि मण्डी के यार्ड में (आहते में) खुली नीलामी के माध्यम से ही बेची जा सकती थी। अब कई राज्यों में उसमें बड़े खरीददारों को अपनी निजी मण्डी चलाने की छुट दे दी गयी है। ऐसी बड़ी खरीददार, विदेशी कम्पनियाँ ही ज्यादा होती हैं।

कई प्रदेशों में इस बदलाव के कारण बड़ी विदेशी कम्पनियाँ जो एक निश्चित मात्रा से ज्यादा मात्रा में माल खरीदेंगी वे किसान के यहाँ तहसील में जाकर खरीदने व में सफल होंगी यानि कि हिन्दुस्तानी व्यापारी तो इस बात से बंधा हुआ है कि वह इंतजार करे कि कृषि मण्डी में किसान माल लेकर आए तो खरीदे और विदेशी कम्पनी जहाँ बड़े क्रेता (Bulk Buyer) होने के नाते चाहे उसी तहसील में जाकर कृषि उपज खरीदे। इसके लिए सारे प्रदेशों की सरकारों के ऊपर केन्द्र सरकार का दबाव रहा है कि APMC कानून को बदला जाए। और 16 प्रदेशों ने APMC कानून मे ऐसे परिवर्तन किये हैं। इनमें ठेके पर कृषि के प्रावधान भी एक तरफा ही हैं जो किसान के हितों की अनदेखी करते हैं।

वस्तुतः कृषि मण्डी सम्बन्धी (APMC Act) में अनुबन्ध पर कृषि के प्रावधान करने का कोई औचित्य नहीं था। इसके दो ही उद्देश्य प्रतीत होते हैं। एक तो बड़ी विदेशी कम्पनियाँ जो बड़ी मात्रा में खरीद करती हैं, उन्हें कृषि मण्डी से बाहर अपनी निजी कृषि मण्डियाँ स्थापित कर खरीदने में स्वच्छंदता देना और बड़ी कम्पनियों को किसानों से अनुबन्ध पर खेती करवाने के अधिकार प्रदान करना। ये दोनों ही तरह के प्रावधान एक प्रकार से फुटकर व्यापार के क्षेत्र में आने वाली विदेशी कम्पनियों को देश में स्वच्छन्दतापूर्वक कृषि उपज खरीदने व संविदा पर कृषि (Contract Farming) करवाने की सुविधार्थ किये ही प्रतीत होते हैं।

विगत 21 वर्षों में अपनायी नव उदारवादी आर्थिक नीतियों के अंतर्गत आयात व विदेशी पूंजी निवेश प्रोत्साहन के परिणामस्वरूप जहाँ देश में 1991 के पूर्व रोजगार सृजन की वार्षिक दर 1.60–2.00 प्रतिशत रही है, वहीं घट कर अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार 2006–2011 के बीच 0.1 प्रतिशत वार्षिक रह गयी है। आज अर्थ व्यवस्था की रोजगार सृजन की स्वतः स्फूर्त सामर्थ्य घट जाने के कारण ही नरेगा जैसी बीसों कृत्रिम रोजगार सृजन की योजनाएँ चलानी पड़ रही हैं। ❑

एफडीआई - चर्चा

एफडीआई मुद्दे पर बसपा–सपा ने भी जनता से किया विश्वासघात

भारत में विदेशी किराना का रास्ता साफ हो गया है। मल्टी ब्रांड रिटेल की मंजूरी के मुद्दे पर लोकसभा और राज्यसभा में यूपीए–2 सरकार ने जीत हासिल की। रिटेल में एफडीआई के मुद्दे पर सपा और बसपा के लोकसभा में पुरजोर विरोध करने के बाद बहाने बनाकर सदन से वॉकआउट किया। इसके बाद राज्यसभा में सपा ने वाक आउट का सहारा लिया, जबकि बसपा ने यहां यूपीए सरकार का खुलकर समर्थन कर दिया। विदेशी किराना पर सरकार की जीत के कारण जो भी हों लेकिन सवाल यह उठ रहे हैं कि यूपी की दोनों ही बड़ी पार्टियों ने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से एफडीआई पर जो समर्थन किया है वह यूपी के 10 करोड़ 77 लाख की जनता के साथ धोखा ही कहलाएगा।

स्वार्थी लोगों के तमाम प्रयासों के बावजूद सरकार एफडीआई के समर्थन में सिर्फ 253 मत ही हासिल कर पाई। अतः यह सरकार अल्पमत में आ गई है साथ ही इसने अपना भरोसा खो दिया है। — **ममता बनर्जी**

सरकार ने मतदान में केवल तकनीकी तौर पर जीत हासिल की है लेकिन नैतिक तौर पर उसकी हर हुई है। — **सुषमा स्वराज**

लोकसभा और राज्य में एफडीआई के मुद्दे पर मिली जीत से मैं खुश हूँ। — **सोनिया गांधी**

रिटेल एफडीआई का सच

यह मौजूदा मुद्दों में सबसे विवादित मुद्दा है। एक ऐसे समय जब राजकोषीय घाटा लगातार बढ़ रहा है, प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह बार–बार कह रहे हैं रिटेल में एफडीआइ को अनुमति देना बेहद जरूरी है, क्योंकि इससे निवेश आएगा। विकास दर छह प्रतिशत से नीचे आ जाने के बाद आर्थिक इंजन को चलाने के लिए विदेशी निवेश अत्यावश्यक है। रिटेल में एफडीआइ लाने के लिए उन्होंने अपनी सरकार तक को दांव पर लगाने की बात कही थी।

सवाल यह है कि रिटेल में एफडीआइ से कितना विदेशी निवेश आने की संभावना है? खुद सरकार के अनुमान के मुताबिक अगले पांच साल में मात्र तीन अरब डॉलर (करीब 16,500 करोड़ रुपये) ही देश में आने की संभावना है। यह ऊंट के मुंह में जीरे के समान है। पिछले दिनों वित्त मंत्री पी. चिदंबरम ने सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों (पीएसयू) को चेताया है कि उनके पास जो ढाई लाख करोड़ रुपये की नकदी है उसे अर्थव्यवस्था में निवेश करें। केवल पीएसयू ही नहीं, भारत का निजी उद्योग जगत भी नकदी के ढेर पर बैठा हुआ है। इसे पूंजी की जमाखोरी कहें या अतिरिक्त पूंजी, पिछले वित्तीय वर्ष की समाप्ति पर भारतीय कंपनियों के पास 9.3 लाख करोड़ (166 अरब डॉलर) की नकदी या फिर ऐसे निवेश थे जिन्हें तुरंत नकदी में बदला जा सकता है। और इसके बाद भी सरकार रिटेल में एफडीआइ खोलने के लिए पूरा जोर लगा रही है, जबकि इससे अगले पांच वर्षो में महज तीन अरब डॉलर मिलने की ही संभावना है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अर्थव्यवस्था के प्रबंधन में भयानक रूप से गलत हो रहा है। पूरी दुनिया पर नजर दौड़ाएं।

यह समझ से परे है कि कोई समझदार व्यक्ति खासतौर पर कोई अर्थशास्त्री या फिर नीति नियंता, इस विडंबना को कैसे उचित ठहरा सकता है। अमेरिकी अर्थव्यवस्था ऐसे समय में संकट में है जब अनेक उद्यमी नकदी के ढेर पर बैठे हुए हैं। अपेक्षा से कमजोर तिमाही में, जहां अनेक कंपनियां अपनी बिक्री के लक्ष्यों को हासिल नहीं कर पाई हैं, 500 बड़ी कंपनियों की बैलेंस शीट में धनराशि में 14 प्रतिशत का इजाफा हुआ है। इन 500 कंपनियों के पास 1500 अरब डॉलर की विपुल धनराशि जमा है। केवल आइटी कंपनी एपल के पास ही 117 अरब डॉलर की धनराशि है। यूरोप में क्या हालात हैं? अकेले यूरोप में उद्योगपतियों के हाथ में करीब 2000 अरब यूरो हैं। यूरोप में कामकाज करने वाली अमेरिकी कंपनियों के पास भी 2000 अरब डॉलर की राशि जमा है। इससे बिल्कुल साफ हो जाता है कि विश्व में पैसे की कोई कमी नहीं है। उद्योगपतियों के पास बेशुमार दौलत है। खजाने खाली हैं तो सरकारों के। अमेरिकी

राष्ट्रपति बराक ओबामा ने दूसरी बार निर्वाचन के बाद जोर देकर कहा था कि अर्थव्यवस्था को उबारने के लिए अमीरों को भी अपनी जिम्मेदारी निभानी चाहिए।

तमाम देशों में अमीरों को बचाने के लिए गरीबों की जेब पर डाका डाला जा रहा है। यूरोप में करोड़ों कामगार वेतन कटौती और सामाजिक सुरक्षा में कमी के खिलाफ सड़कों पर विरोध प्रदर्शन कर रहे हैं। कटौतियों के कारण मंदी बढ़ रही है और बड़े पैमाने पर बेरोजगारी बढ़ रही है। जाहिर है, इसके कारण लोगों में आक्रोश भी बढ़ रहा है। अमेरिका, यूरोप या फिर भारत हर जगह आम आदमी उन नीतियों पर गुस्से से भरा है जो सामाजिक सुरक्षा पर कुठाराघात कर रही हैं और मंदी में लोगों का जीना दूभर कर रही हैं, किंतु क्या संकट की इस घड़ी में गरीबों को ही बलि का बकरा बना देना चाहिए? जब अमीरों के पास बेशुमार दौलत है, तो फिर गरीबों को ही संकट का खामियाजा क्यों भुगतना चाहिए?

– **देविन्दर शर्मा**

मुस्लिम विरोधी है एफडीआई

रिटेल में एफडीआई के मुद्दे पर जब संसद में बहस चल रही थी और वोटिंग द्वारा फैसला हो रहा था, तो इन राजनीतिक दलों और राजनेताओं के मुस्लिम समर्थन की पोल खुल रही थी। इन राजनेताओं का कहना है कि यदि इस मुद्दे पर यूपीए सरकार के इस फैसले के विरोध में मतदान किया जाता है तो इसका लाभ भारतीय जनता पार्टी को मिलेगा और साम्प्रदायिक शक्तियां मजबूत हो जायेंगी। इसका मतलब यह है कि एफडीआई का समर्थन यानि धर्मनिरपेक्षता का समर्थन होगा। वामदल हालांकि भारतीय जनता पार्टी को साम्प्रदायिक करार देते हैं, लेकिन उन्होंने एफडीआई के मुद्दे पर सरकार के विरोध में मत दिया।

भारत में खुदरा क्षेत्र में तरह–तरह से कार्य का संचालन होता है। कहीं तो बड़े–बड़े स्टोर खुदरा सामान की बिक्री करते है, तो कहीं 10 फुट की दुकान से लेकर 500 फुट की बड़ी दुकाने चलती हैं। लेकिन इन दुकानों की तुलना में कहीं बड़ी तादाद में रेहरी, पटरी, खोमचा लगाने वाले लोग हैं, जो कहीं फुटपाथ पर तो कहीं सड़कों पर तो कहीं तहबाजारी (साप्ताहिक बाजार) में काम करते हैं। इन रेहरी, पटरी, खोमचे और तहबाजारी में देश का गरीब जन बड़ी संख्या में संलग्न है। आमतौर पर यह माना जाता है कि जो व्यक्ति कम शिक्षित है, वह इस प्रकार के स्वरोजगार में लग जाता है। सच्चर कमेटी का यह कहना था कि देश में अन्य वर्गों की तुलना में मुस्लिम कही कम शिक्षित है, और इसलिए गरीब है। यही बात दलितों पर भी लागू होती है।

हम देखतें हैं कि फल और सब्जी बेचने वाले अधिकतर लोग मुस्लिम तथा दलित वर्ग से आते हैं। इसी प्रकार रेहरी, पटरी, खोमचा और छोटी दुकानें अधिकतर इन्हीं वर्गों द्वार संचालित होती हैं। यह बात सच्चर कमेटी की रिपोर्ट से भी साबित होती है, जिसके अनुसार हमारे देश में मुस्लिम कार्यशील जनसंख्या का 17 प्रतिशत खुदरा क्षेत्र में संलग्न हैं, जबकि अन्य अल्पसंख्यक समुदायों की कार्यशील जनसंख्या का 10 प्रतिशत खुदरा क्षेत्र में लगा हुआ है। गौरतलब है कि हिन्दु जनसंख्या का मात्र 8 प्रतिशत ही खुदरा क्षेत्र में लगा हुआ है।

खुदरा क्षेत्र में विदेशी निवेश का दूसरा खामियाजा उद्योग क्षेत्र में लगे मजदूरों को भुगतना पड़ेगा। वैश्विक स्तर पर किए गए अध्ययनों के अनुसार विदेशी कंपनियों द्वारा संचालित स्टोरों में अधिकतर चीन में बना सामान बेचा जाता है। वालमार्ट चीन से आयात करने वाली सबसे बड़ी कंपनी है। यानि यदि वालमार्ट के स्टोर खुलते हैं, तो खुदरा क्षेत्र में माल की खरीद भारत की बजाय चीन से ज्यादा होने लगेगी। हम जानते हैं कि हमारे देश की कारीगर और मजदूर जनसंख्या में मुस्लिमों का बाहुल्य है। गौरतलब है कि सच्चर कमेटी के अनुसार मुस्लिम कार्यशील जनसंख्या का 21 प्रतिशत हिस्सा मैन्युफैक्चरिंग में क्षेत्र में लगा हुआ है।

इसी प्रकार दलितों पर भी खुदरा क्षेत्र में एफडीआई खोलने का भारी दुष्प्रभाव पड़ने की पूरी संभावना है। बड़ी संख्या में हमारे कारीगर दलित समाज से हैं। बुनकर, लुहार, कुम्हार और अनेक प्रकार के अन्य कारीगर जो हथकरघा उद्योग से जुड़े हैं, खुदरा क्षेत्र में बड़ी कम्पनियों के आने से अपना रोजगार खो देंगे।

मुलायम सिंह जो मुस्लिमों के मसीहा होने का दंभ भरते हैं और बहन मायावती जो दलितों के उत्थान की बात करती हैं, को एफडीआई का समर्थन करने का जबाव देना होगा। वे किसी भी तर्क से अपनी बात को ठीक नहीं ठहरा पाएंगे, लेकिन उनकी इस ऐतिहासिक भूल का खामियाजा सबको भुगतना होगा। – **डॉ. अश्विनी महाजन**

26 शहरों में खुल सकेंगे विदेशी दुकानें

- 17 राज्यों और एक केन्द्र शासित प्रदेश में दस लाख से ज्यादा आबादी वाले 53 शहर हैं। वहां इनके स्टोर खुल की संभावना है।
- उत्तराखंड समेत कई छोटे राज्य इन दुकानों के पक्ष में है लेकिन यहां दस लाख या इससे ज्यादा आबादी वाले शहर नहीं हैं। ये राज्य चाहें तो अपने सबसे बड़े शहर जिनका क्षेत्रफल 10 वर्ग किमी से ज्यादा है, विदेशी दुकानें खोलने की इजाजत दे सकते हैं।
- यूपी और केरल में 70 लाख से अधिक आबादी वाले सबसे ज्यादा शहर है। महाराष्ट्र में 6, तमिलनाडु, गुजरात, मध्य प्रदेश में 4–4, झारखंड, राजस्थान, आंध्र में 3–3, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, पंजाब में 2–2, जम्मू कश्मीर, कर्नाटक, हरियाणा में 1–1 शहर है।
- उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल समेत एनडीए शासित राज्यों ने इसे लागू नहीं करने की बात कही है, इसलिए इन राज्यों के 27 शहरों में विदेशी किराना दुकानें नहीं खुल सकेंगी।

पड़ताल

खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश : अतार्किक दावे

सरकार की दलील है कि एफडीआई से बिचौलिये खत्म हो जाएंगे और उपभोक्ताओं को फायदा होगा। व्यावहारिक रूप से ये सही नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों से पता चलता है कि अधिकतम खाद्य पदार्थों की बिक्री पर नियंत्रण रखने वाली बड़ी कंपनियां बहुत कम हैं। इन कंपनियों के पास कुछ हद तक एकाधिकार है। पश्चिमी यूरोप में 3. 2 मिलियन किसान है जो 160 मिलियन उपभोक्ताओं को उत्पाद बेचते हैं. . . भारत में भी हमने देखा है कि बड़ी कंपनियां खरीदारी करती है, लेकिन एक किलो आटे की कीमत फिर भी 20–25 रुपए आता है जबकि किसानों को 11–13 रुपए मिलते हैं। 10 साल पहले स्थिति अलग थी तब थोक और खुदरा मूल्य में 20 प्रतिशत से ज्यादा का अंतर नहीं था।

गतांक से आगे :–

खुदरा में एफ.डी.आई. किसान विरोधी

सरकार ने किसानों को सामने रखकर इस बहस को खत्म करने की कोशिश की। सरकार का तर्क है ये नीति किसान और खेती–बाड़ी दोनों के लिए फायदेमंद हैं। सरकार की ये दलील बहुराष्ट्रीय खुदरा कंपनियों वालमार्ट के विज्ञापन में भी है। अमेरिकी सरकार के अधिकारी और दूसरे हित समूह भी यही तर्क देते है। यह साफ है कि जिनका हित इस नीति में है, वे इसकी दलील देंगे।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने की जिम्मेदारी जिस प्रकार पर है वो भी इस तर्क को मान रही है। कंपनी वालमार्ट का विज्ञापन कहता है कि वो किसानों को 7 से 10 फीसदी ज्यादा कीमतें देंगे।

उनका दावा है कि किसानों को फसल प्रबंधन पर विशेषज्ञों की सलाह दी जाएगी। कंपनी से मिलने वाले समर्थन की वजह से बड़े गुणवत्ता वाले उत्पाद उपजा सकेंगे और उनकी आय बढ़ेगी। अमेरिकी सरकार के अधिकारी भी यही तर्क दे रहे हैं। उनका दावा है कि संगठित खुदरा व्यापार में न सिर्फ ग्राहकों बल्कि किसानों का भी फायदा होगा।

■ स्वदेशी संवाद

उधार की दलीलों को सच के आइने में देखने की जरूरत है। अगर हम अमरीका की नजर से देखें तो, वहाँ बड़े किसान होते हैं। खेती–बाड़ी बड़े पैमाने पर होती है और यह एक तरह से खेती का औद्योगीकरण है। दूसरी तरफ, खुदरा व्यापार ज्यादा से ज्यादा बड़ी कंपनियों के हाथ में जा रहा है। सो सरकार और इन कंपनियों की

जिन देशों में बहुराष्ट्रीय खुदरा कंपनियां है, वहां की तुलना भारत से करने पर रोचक तथ्य सामने आते हैं। 1910 में अमरीका द्वारा खाद्य पदार्थों पर खर्च रकम का 40 प्रतिशत किसानों को आता था। आज यह औसत 25 फीसदी से कम है. . .चीन में 35 में से 22 रुपए किसानों के पास जाते हैं। हालांकि सब्जियों के मामले में ऐसा नहीं है। इसकी वजह आधारभूत ढांचा है। फिर भी, अमेरिकी मॉडल की जगह भारतीय मॉडल किसानों के लिए ज्यादा फायदेमंद है।

दलीलों के मुताबिक किसानों को अपने उत्पाद का बेहतर मूल्य मिलेगा। हालांकि अनुभव दूसरी कहानी कहता है। अमरीका में कुल खाद्य खर्च वर्ष 2000 में 833 बिलियन डॉलर से बढ़कर 2009 में 1200 बिलियन डॉलर हो गया।

दूसरी तरफ इसी दौरान कृषि उत्पादों से नकद आय 197.6 बिलियन डॉलर से बढ़कर 282.2 बिलियन डॉलर हो गई। इससे स्पष्ट है कि इन सालों में बड़ी कंपनियों ने सिर्फ किसानों को चूसा है। अमरीका के कृषि मंत्रालय के मुताबिक 2000 से 2009 के बीच ताजी सब्जियों की कीमतों में 25 से 28 फीसदी का उतार चढ़ाव देखा गया। ताजे फल के मामले में ये आंकड़ा 25 से 30 फीसदी था। इस तरह ये कहना कि किसानों को अच्छी कीमत मिलेगी, एक तरह की साजिश है। इसलिए इस पर बारीकी से नजर डालने की जरूरत है।

वालमार्ट देश की अगली फसल को वायदा बाजार में पहले से तय कीमत पर खरीद लेता है। यह चीन में सस्ते उत्पाद आयात करता है और घरेलू उत्पादन को खत्म कर देता है। पहले मामले को देखें तो अमरीका और दुनिया के बाजारों में 2007 की तुलना में अप्रैल 2008 में चावल की कीमतें तिगुनी हो गई। इस तरह तत्कालीन अमरीकी राष्ट्रपति ने ये हास्यास्पद दलील दी कि समृद्ध भारतीयों के ज्यादा खाने में कीमतें बढ़ी है।

लेकिन सच्चाई क्या है कि यू.एस.ए. टुडे (23 अप्रैल, 2008) और सीएनएन (24 अप्रैल 2008) ने कैलीफोर्निया चावल आयोग और अमरीका चावल फेडरेशन के हवाले से चावल की कमी से इनकार किया और भरपूर स्टॉक की बात कही। तो फिर दाम क्यों बढ़े? सीएनएन के मुताबिक वालमार्ट ने थोक विभाग सैम्स क्लब ने चावल की जमाखोरी कर ली और दाम बढ़ा दिए। अमरीका के किसानों ने सट्टेबाजों और वालमार्ट कारोबार पर इसका दोष बढ़ा। किसान वायदा बाजार में अपना उत्पाद बेचते हैं न कि इनका व्यापार करते हैं। वायदा बाजार में अपने उत्पाद बेचने वाले किसानां को इसमें घाटा हुआ और वालमार्ट को फायदा। जब कुछ किसानों ने अपने उत्पाद बेचने चाहे तो वालमार्ट ने खरीदने से मना कर दिया।

अगर वालमार्ट से अमरीका के किसानों को अच्छे दाम मिलते हैं तो क्यों वहां की सरकार हर साल 20 बिलियन डॉलर की कृषि सब्सिडी देती है जबकि वहां किसानों की संख्या आबादी का 2 प्रतिशत है। वहीं यूरोपीय यूनियन में 5 प्रतिशत कृषक आबादी है जो 74.5 मिलियन डॉलर की सालाना सब्सिडी देता है।

अगर वालमार्ट से अमरीका के किसानों को अच्छे दाम मिलते हैं तो क्यों वहां की सरकार हर साल 20 बिलियन डॉलर की कृषि सब्सिडी देती है जबकि वहां किसानों की संख्या आबादी का 2 प्रतिशत है। वहीं यूरोपीय यूनियन में 5 प्रतिशत कृषक आबादी है जो 74.5 मिलियन डॉलर की सालाना सब्सिडी देता है।

जिन देशों में बहुराष्ट्रीय खुदरा कंपनियां है, वहां की तुलना भारत से करने पर रोचक तथ्य सामने आते हैं। 1910 में अमरीका द्वारा खाद्य पदार्थों पर खर्च रकम का 40 प्रतिशत किसानों को आता था। आज यह औसत 25 फीसदी से कम है। अमरीका में दूध के मामले में 45 प्रतिशत, अण्डा 41 प्रतिशत, मीट उत्पाद 32 प्रतिशत खुदरा कीमत किसानों तक पहुंचती है। भारत में फिलहाल अमूल दूध के 34 रुपए में से किसानों को 26 रुपए या 76.5 प्रतिशत मिलता है। चीन में 35 में से 22 रुपए किसानों के पास जाते हैं। हालांकि सब्जियों के मामले में ऐसा नहीं है। इसकी वजह आधारभूत ढांचा है। फिर भी, अमेरिकी मॉडल की जगह भारतीय मॉडल किसानों के लिए ज्यादा फायदेमंद है।

सरकार की दलील है कि एफडीआई से बिचौलिये खत्म हो जाएंगे और उपभोक्ताओं को फायदा होगा। व्यावहारिक रूप से ये सही नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों से पता चलता है कि अधिकतम खाद्य पदार्थों की बिक्री पर नियंत्रण रखने वाली बड़ी कंपनियां बहुत कम हैं। इन कंपनियों के पास कुछ हद तक एकाधिकार है। पश्चिमी यूरोप में 3.2 मिलियन किसान है जो 160 मिलियन उपभोक्ताओं को उत्पाद बेचते हैं। लेकिन उन कंपनियों की संख्या बहुत कम है जो सीधे किसानों से खरीद करती है। ब्रिटेन में 4 कंपनियों का दो–तिहाई खाद्य व्यापार पर नियंत्रण है। यही स्थिति अमरीका में है, यहां 5 कंपनियों के पास 60 प्रतिशत हिस्सेदारी है।

भारत में भी हमने देखा है कि बड़ी कंपनियां खरीदारी करती है, लेकिन एक किलो आटे की कीमत फिर भी 20–25 रुपए आता है जबकि किसानों को 11–13 रुपए मिलते हैं। 10 साल पहले स्थिति अलग थी तब थोक और खुदरा मूल्य में 20 प्रतिशत से ज्यादा का अंतर नहीं था।

सरकार का यह दावा पूरी तरह भ्रामक है कि बड़ी खुदरा कंपनियां गोदामों और कोल्ड स्टोरेज का निर्माण करेगी। गोदामों और कोल्ड स्टोरेज में एफडीआई

की अनुमति एक दशक पहले ही दे दी गई थी। लेकिन विदेशी निवेश नहीं आया। इसलिए जो भी आधारभूत ढांचा खड़ा होगा, वो किसानों के शोषण के लिए होगा न कि उनके फायदे के लिए। केंद्र और राज्यों में आधारभूत ढांचे का निर्माण सरकार की जिम्मेदारी है। सरकार आजादी के 6 दशक बाद भी ये सुविधा मुहैय्या नहीं करा पाई है। अब सरकार अपनी नाकामी को छिपाने के लिए खुदरा में एफडीआई का ढिंढोरा पीट रही है। सरकार के आंकलन के मुताबिक ग्रामीण इलाकों में आधारभूत ढांचे के लिए 7,687 करोड़ रुपए की जरूरत है। यह कोई इतनी बड़ी रकम नहीं है, जिसके लिए एफडीआई लाया जाए। वो भी करोड़ों छोटे कारोबारियों के पेट पर लात मारकर।

अंतर्राष्ट्रीय अनुभव बताते हैं कि बड़ी कंपनियों के गुणवत्ता मानक की वजह से किसानों को भारी घाटा होता है। एमएओ की रिपोर्ट के मुताबिक सुपर मार्केट की गुणवत्ता मानकों और मार्केटिंग नीति से किसानों को घाटा हो रहा है। मल्टीनेशनल रिटेल कंपनियों द्वारा आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन के तहत बनाए जाने वाले गोदामों और कोल्ड स्टोरेज में किसानों को कोई फायदा नहीं होगा। ऐसा इसलिए है कि क्योंकि किसानों को अपने उत्पाद या तो फेंकना होगा या फिर जानवरों को खिलाना। वहीं छोटे दुकानदारों के मामले में ये उत्पाद ग्राहकों तक पहुंचते और किसानों को इसका फायदा मिलता। यह ऐसा नुकसान है जो भारत जैसा देश नहीं उठा सकता क्योंकि अधिकांश आबादी भुखमरी और कुपोषझा का शिकार है।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा कीमतों पर नियंत्रण की थोथी दलीलें

इस नीति के पक्ष में सरकार का बड़ा तर्क ये है कि इससे महंगाई पर लगाम लगेगी। इसलिए महंगाई से पिस रही आम जनता इस नीति का स्वागत करेगी। लेकिन सभी गैर कांग्रेसी राजनीतिक दल चाहे वो सरकार में हो या विपक्ष में, सामाजिक संगठन, श्रमिक, किसान संगठन आदि इसका विरोध कर रहे हैं।

अंतर्राष्ट्रीय अनुभव बताते हैं कि बड़ी कंपनियों के गुणवत्ता मानक की वजह से किसानों को भारी घाटा होता है। एमएओ की रिपोर्ट के मुताबिक सुपर मार्केट की गुणवत्ता मानकों और मार्केटिंग नीति से किसानों को घाटा हो रहा है। मल्टीनेशनल रिटेल कंपनियों द्वारा आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन के तहत बनाए जाने वाले गोदामों और कोल्ड स्टोरेज में किसानों को कोई फायदा नहीं होगा। ऐसा इसलिए है कि क्योंकि किसानों को अपने उत्पाद या तो फेंकना होगा या फिर जानवरों को खिलाना।

सरकार का दावा

सरकार की दलील है कि इस नीति से वितरण की लागत कम होगी। सरकार का दावा है कि ये कंपनियां सीधे किसानों के उत्पाद खरीदेंगी और इस तरह बिचौलियों की परंपरा खत्म हो जाएगी। इससे खरीद की कम लागत का फायदा उपभोक्ताओं को मिलेगा और महंगाई पर लगाम लगेगी। सरकार का दावा है कि ये कंपनियां आधुनिक तकनीक का इस्तेमाल करेंगी। इससे उपभोक्ताओं से ली जाने वाली कीमत कम होगी। सरकार का तो ये भी दावा है कि ये अपने प्रभावी तंत्र का फायदा छोटे दुकानदारों को भी देंगे।

रसोई से जुड़े सामान में भारतीय खुदरा व्यापारी सिर्फ 30 प्रतिशत तक मुनाफा कमाते हैं, वहीं वालमार्ट जैसी कंपनियां लागत में 200 फीसदी तक मुनाफा कमाते है। इस तरह इस मामले में बड़ी कंपनियां भारतीयों के मुकाबले 5 गुणा अधिक मुनाफा कमा रही है।

सरकार के दावे बिना किसी अध्ययन के

सरकार दावे कर रही है, लेकिन उनके पास इसका आधार नहीं है। यहाँ तक कि आई.सी.आर.आई.ई.आर. की रिपोर्ट भी इस नीति को इस आधार पर सही ठहराने में विफल रही है। रोचक तथ्य है कि अंतर मंत्रालयी समूह के अगुआ और सरकार के तत्कालीन मुख्य आर्थिक सलाहकार कौशिक बसु ने भी खुदरा में एफडीआई का इस आधार पर समर्थन किया है कि इससे महंगाई पर लगाम लगेगी।

उन्होंने कहा कि सरकार को इस बारे में जल्द फैसला करना होगा क्योंकि भारत का खुदरा बाजार अब भी नवजात अवस्था में है और किसानों से उपभोक्ताओं तक की जो श्रृंखला है, उसमें बर्बादी बहुत अधिक है। उनकी दलील थी कि पुरानी तकनीक और प्रबंधकीय तरीकों की वजह से एक जगह से दूसरी जगह उत्पाद को ले जाने में कीमतें बढ़ती है।

आईएमजी का कहना था कि इस क्षेत्र में सुधार कर महंगाई रोकी जा सकती है। हालांकि उसने अपने सुझाव के समर्थन में कोई आधार नहीं दिया। वहीं एफएओ ने इससे उल्टे आंकड़े दिए है। उनका कहना है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों की वजह से दरअसल खाद्य वस्तुओं का नुकसान हो रहा है। अगर हम सरकार और उसके अधिकारियों के दावों को बारीके से देखें तो ये उनके अपने अध्ययन पर भी आधारित नहीं है। ये तर्क दरअसल वालमार्ट, टेस्को और केरीफोर जैसी कंपनियों से उधार लिए गए हैं।

आईएमजी का कहना था कि इस क्षेत्र में सुधार कर महंगाई रोकी जा सकती है। हालांकि उसने अपने सुझाव के समर्थन में कोई आधार नहीं दिया। वहीं एफएओ ने इससे उल्टे आंकड़े दिए है। उनका कहना है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों की वजह से दरअसल खाद्य वस्तुओं का नुकसान हो रहा है। अगर हम सरकार और उसके अधिकारियों के दावों को बारीके से देखें तो ये उनके अपने अध्ययन पर भी आधारित नहीं है। ये तर्क दरअसल वालमार्ट, टेस्को और केरीफोर जैसी कंपनियों से उधार लिए गए हैं।

बड़ी कंपनियों को बड़ा फायदा

बहुराष्ट्रीय कंपनियों के उलट भारत में थोक और खुदरा के बीच का फायदा बहुत कम है। ज्यादा मुनाफा कमाना इन कंपनी की नीतियों में शामिल है। छोटे भारतीय खुदरा कारोबारियों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के फायदे पर यह तुलनात्मक अध्ययन रोचक तस्वीर पेश करता है कि वितरक और थोक विक्रेता के बीच मार्जिन 4 से 8 प्रतिशत है। वहीं खुदरा व्यापार में 8 से 14 प्रतिशत। इस मार्जिन को उत्पाद लागत में जोड़ा जाता है। इस तरह भारत में वितरण श्रृंखला की लागत 12 से 22 प्रतिशत है।

अगर हम बड़ी कंपनियों की बात करें तो उनकी मार्जिन करीब 40 प्रतिशत है। कपड़ा कारोबार को लें तो भारतीय थोक और खुदरा कारोबारियों के बीच 35 से 40 प्रतिशत का मार्जिन है। वहीं बड़ी कंपनियों का अनुभव बताता है कि वे बिक्री कीमत लागत के 2 से 4.5 गुणा अधिक रखते हैं। इस तरह उनकी मार्जिन भारतीय कारोबारियों से 5 से 9 गुणा अधिक है। दवाइयों के मामलों में खुदरा व्यापारियों का 20 प्रतिशत तक की मार्जिन है। थोक में 10 प्रतिशत और उससे पहले 4 प्रतिशत तक।

बड़ी कंपनियों जैसे ब्रिटेन की बूट्स और अमेरिका वॉल ग्रीन्स लागत से 2 से 3 गुणा अधिक मुनाफा कमाते हैं। इस तरह उनकी मार्जिन भारतीय कारोबारियों से 2 गुणा अधिक है। वहीं रसोई से जुड़े सामान में भारतीय खुदरा व्यापारी सिर्फ 30 प्रतिशत तक मुनाफा कमाते हैं, वहीं वालमार्ट जैसी कंपनियां लागत में 200 फीसदी तक मुनाफा कमाते है। इस तरह इस मामले में बड़ी कंपनियां भारतीयों के मुकाबले 5 गुणा अधिक मुनाफा कमा रही है। अगर हम मार्जिन की बात करें तो बड़ी कंपनियों की कीमत हमेशा भारतीय छोटे व्यापारियों से ज्यादा होती है। इसकी वजह है कि उनका इन पर एकाधिकार है। क्योंकि ऐसी कंपनियों की संख्या किसी भी देश में 5 से ज्यादा नहीं होती।

बड़ी कंपनियां गाजे–बाजे के साथ अपने स्टोर खोलती हैं और शुरूआत में कम कीमत पर अपने उत्पाद बेचती हैं और तब तक बेचती हैं, जब तक छोटे व्यापारी खत्म नहीं हो जाते। शुरूआत में ये कंपनियां यही रणनीति अपनाती है।

इससे पता चलता है कि छोटे खुदरा कारोबार की जगह रिटेल की प्रक्रिया में ज्यादा लागत आती है। ऐसा होता है कि वे अपने एकाधिकार का फायदा कम कीमत में किसानों और उत्पादकों से उत्पाद खरीद लें। लेकिन वे इसे बहुत दिनों तक सस्ते में नहीं बेच सकेंगे क्योंकि उन्हें अपने स्टोर, गोदामों और कोल्ड स्टोरेज की लागत निकालनी होती है।

शेखर स्वामी के शब्दों में ''ये बड़ी कंपनियां गाजे–बाजे के साथ अपने स्टोर खोलती हैं और शुरूआत में कम कीमत पर अपने उत्पाद बेचती हैं और तब तक बेचती हैं, जब तक छोटे व्यापारी खत्म नहीं हो जाते। शुरूआत में ये कंपनियां यही रणनीति अपनाती है। हम जानते हैं कि हर बड़ी कंपनी का अपने नियंत्रण के क्षेत्र में मार्केट में एक बड़ा हिस्सा होता है। इससे उनकी वित्तीय स्थिति मजबूत होती है।

हम सोच भी नहीं सकते कि छोटे कारोबारी एक महीने के लिए भी घाटा उठा सकता है। लेकिन हम देखते हैं कि बहुराष्ट्रीय कंपनियां इन छोटे कारोबारियों को अपने रास्ते में से हटाने के लिए करोड़ों रुपए खर्च करती है, क्योंकि उनकी नजरें 22 लाख करोड़ रुपए के भारतीय खुदरा बाजार पर है।'' ❑

किसानों को बर्बाद करने की योजना

सरकारी खरीद बंद करने और एफसीआई के बाजार में दखल देने की नई भूमिका से भारत में कृषि बर्बाद हो जाएगी। देश के जिन भागों में एफसीआइ सक्रिय नहीं है, वहां किसान बहुत कम कीमत पर गेहूं और धान बाजार में बेचने को मजबूर हैं। इस प्रकार एफसीआइ तो पहले से ही मूल्य जोखिम प्रबंधन की जिम्मेदारी निभा रहा है। अमेरिका के अनुभव से स्पष्ट हो जाता है कि इन आर्थिक जिम्मेदारियों को निभाने की सट्टा बाजार से की जा रही अपेक्षाएं महज खयाली पुलाव हैं। अमेरिका के शिकागो में विश्व का सबसे बड़ा कमोडिटी एक्सचेंज है, इसके बावजूद अमेरिका में सट्टेबाजी से किसानों का कोई भला नहीं हुआ।

■ देविन्दर शर्मा

इससे अधिक नुकसानदेह और कुछ नहीं हो सकता। चीनी से नियंत्रण हटाने की योजना है। इससे गन्ना उगाने वाले किसान शुगर मिलों की दया पर निर्भर हो जाएंगे। रंगराजन कमेटी द्वारा गन्ने के स्टेट एडवाइस्ड प्राइस (एसएपी) को खत्म करने के सुझाव के बाद अब किसानों को फेयर एंड रेमुनेरेटिव प्राइस (एफआरपी) पर निर्भर रहना होगा। एफआरपी का निर्धारण केंद्र सरकार करती है और यह राज्य सरकारों द्वारा तय किए जाने वाले मूल्य से काफी कम होता है। एक प्रकार से यह कदम गन्ने की पैदावार और चीनी के उत्पादन को बाजार के नियंत्रण में लाने के उद्देश्य से उठाया गया है।

यही नीति अब गेहूं और धान पर भी लागू की जा रही है। पांच सालों में पहली बार इस साल गेहूं के न्यूनतम समर्थन मूल्य में कोई बढ़ोतरी न करने के बाद सरकार इस बात पर विचार कर रही है कि क्या गेहूं के दाम बढ़ाने की आवश्यकता है और क्या गेहूं की खरीद को बाजार की अर्थव्यवस्था से जोड़ देना चाहिए। गेहूं के दाम न बढ़ाकर सरकार संभवतः गेहूं से ध्यान हटाकर नकदी फसल पर केंद्रित करना चाहती है। इस फैसले का असर किसानों के साथ–साथ करोड़ों भूखे लोगों पर भी पड़ेगा। न्यूनतम मूल्य हरित क्रांति की विशिष्टता थी, जिसने खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि में बड़ी भूमिका निभाई।

मूल खाद्यान्न से न्यूनतम समर्थन मूल्य वापस ले लेने का मतलब होगा – खाद्यान्न के निर्यात में इजाफा। यह चरणबद्ध तरीके से हो रहा है।

एक ऐसे समय जब वैश्विक भूख सूचकांक 2012 में 79 देशों की सूची में भारत 65वें स्थान पर है, खाद्यान्न एवं सार्वजनिक वितरण राज्य मंत्री केवी थॉमस फरमा रहे हैं कि भारतीय खाद्य निगम (एफसीआई) अब जल्द ही सट्टा बाजार में

2007 में जब वैश्विक खाद्यान्न संकट चरम पर था और 37 देशों में खाद्यान्न को लेकर दंगे भड़क रहे थे, संयुक्त राष्ट्र की विशेष रिपोर्ट में कहा गया था कि खाद्यान्न के दाम बढ़ने के पीछे सबसे बड़ा हाथ सट्टेबाजी का था। खाद्यान्न की कीमतें मांग और आपूर्ति से तय नहीं हो रही थीं, बल्कि वित्तीय अटकलें और सट्टेबाजी में निवेश इनकी बढ़ोतरी के कारक थे।

2012 के उत्तरार्ध में एक बार फिर वैश्विक खाद्यान्न की कीमतों में जबरदस्त उछाल देखने को मिल रहा है। अमेरिका में सूखे की आशंका और रूस व उक्रेन में खाद्यान्न उत्पादन में कमी से खाद्यान्न में व्यापार करने वाली विश्व की सबसे बड़ी कंपनी कारगिल मालामाल हो गई। एक अन्य बड़ी कंपनी ग्लेनकोर भी इसी राह पर चल रही है। एफसीआई को व्यापारिक इकाई में बदलने में गंभीर खतरे निहित हैं। भारत जैसे विशाल देश में, जिस पर विश्व में सबसे अधिक भूखी आबादी का दाग लगा है।

गेहूं का व्यापार करेगा। फॉर्वर्ड मार्केट कमीशन (एफएमसी) से जरूरी अनुमति की मांग करते हुए मंत्री ने कहा कि बाजार को मूल्य जोखिम प्रबंधन में आर्थिक आधार पर काम करना चाहिए। इससे यह मतलब निकलता है कि वह खुला बाजार बिक्री योजना (ओएमएसएस) के स्थान पर सट्टा बाजार में व्यापार करना चाहते हैं।

दूसरे शब्दों में, सट्टा बाजार भारतीय खाद्य निगम के सामने कुछ लाभ कमाने का अवसर पेश करेगा, जिसको वापस खाद्यान्न खरीद में लगा दिया जाएगा। इस प्रकार सरकार को खाद्यान्न सब्सिडी में कटौती का मौका मिल जाएगा। यह है सरकार की योजना। यह इतना आसान नहीं है जितना नजर आता है।

खाद्यान्न की सरकारी खरीद के साथ–साथ एफसीआई की एक भूमिका खाद्यान्न की महंगाई पर अंकुश लगाना भी है। जब भी घरेलू बाजार में गेहूं और धान की कीमतें बढ़ती हैं एफसीआई खुले बाजार में खाद्यान्न बेचकर कीमतों को नीचे लाता है।

संयुक्त राष्ट्र के खाद्यान्न एवं कृषि संगठन (एफएओ) के अनुसार जून 2011 से जुलाई 2012 तक एक वर्ष में भारत में गेहूं के दामों में सूडान के बाद विश्व में सबसे अधिक बढ़ोतरी दर्ज की गई। धान के संदर्भ में विश्व में भारत तीसरे स्थान पर रहा और वह भी तब जब भारत के भंडारण गृहों में भारी मात्रा में अतिरिक्त खाद्यान्न उपलब्ध था।

बाजार मूल्य पर दबाव कम करने के लिए जुलाई–अगस्त में थोक उपभोक्ताओं तथा छोटे निजी व्यापारियों के लिए एफसीआई ने 26.02 लाख टन गेहूं की टेंडर के आधार पर बिक्री की थी। इससे घरेलू बाजार में गेहूं के दामों को कम करने में मदद मिली। दामों को कम करने में एफसीआई की इस नाजुक भूमिका में बदलाव के सरकार के फैसले में मुझे कोई औचित्य नजर नहीं आता।

सरकार की नई योजना से एफसीआई खाद्यान्न के दाम घटाने के बजाय बढ़ाने में प्रमुख भूमिका निभाएगी। सट्टेबाजी में उतरने के बाद पहले से ही ऊंचे रेट फिक्स करके एफसीआई महंगाई बढ़ाने के सबसे बड़े खिलाड़ी के रूप में उभरेगा। यह खाद्यान्न की भारी मात्रा के बल पर बाजार का रुख मोड़ सकने की ताकत रखता है। इसका सीधा असर खाद्यान्न के दामों में तीव्र वृद्धि के रूप में देखने को मिलेगा।

संयुक्त राष्ट्र के खाद्यान्न एवं कृषि संगठन (एफएओ) के अनुसार जून 2011 से जुलाई 2012 तक एक वर्ष में भारत में गेहूं के दामों में सूडान के बाद विश्व में सबसे अधिक बढ़ोतरी दर्ज की गई। धान के संदर्भ में विश्व में भारत तीसरे स्थान पर रहा और वह भी तब जब भारत के भंडारण गृहों में भारी मात्रा में अतिरिक्त खाद्यान्न उपलब्ध था।

अंतरराष्ट्रीय बाजारों पर एक नजर डालकर देखा जाए कि इनमें हमारे लिए क्या सीख हो सकती है। 2007 में जब वैश्विक खाद्यान्न संकट चरम पर था और 37 देशों में खाद्यान्न को लेकर दंगे भड़क रहे थे, संयुक्त राष्ट्र की विशेष रिपोर्ट में कहा गया था कि खाद्यान्न के दाम बढ़ने के पीछे सबसे बड़ा हाथ सट्टेबाजी का था। खाद्यान्न की कीमतें मांग और आपूर्ति से तय नहीं हो रही थीं, बल्कि वित्तीय अटकलें और सट्टेबाजी में निवेश इनकी बढ़ोतरी के कारक थे। मानवीय पीड़ा और भूखे पेट की कीमत पर कुछ कृषिव्यापार क्षेत्र की बड़ी कंपनियों ने मोटा मुनाफा कमाया।

2012 के उत्तरार्ध में एक बार फिर वैश्विक खाद्यान्न की कीमतों में जबरदस्त उछाल देखने को मिल रहा है। अमेरिका में सूखे की आशंका और रूस व उक्रेन में खाद्यान्न उत्पादन में कमी से खाद्यान्न में व्यापार करने वाली विश्व की सबसे बड़ी कंपनी कारगिल मालामाल हो गई। एक अन्य बड़ी कंपनी ग्लेनकोर भी इसी राह पर चल रही है। एफसीआई को व्यापारिक इकाई में बदलने में गंभीर खतरे निहित हैं। भारत जैसे विशाल देश में, जिस पर विश्व में सबसे अधिक भूखी आबादी का दाग लगा है।

एफसीआई मुख्यतः दो भूमिकाएं निभाता है। पहली भूमिका यह है कि यह किसानों से पहले से तय की गई कीमतों पर खाद्यान्न की खरीदारी करता है। भारतीय किसानों के लिए सरकारी उसकी फसल का लाभकारी मूल्य दिलाती है। यद्यपि हर साल 22 फसलों का खरीद मूल्य घोषित किया जाता है, एफसीआई केवल गेहूं और धान की खरीद ही करता है। गेहूं और धान का उत्पादन बढ़ने का यही प्रमुख कारण है।

सरकारी खरीद बंद करने और एफसीआई के बाजार में दखल देने की नई भूमिका से भारत में कृषि बर्बाद हो जाएगी। देश के जिन भागों में एफसीआई सक्रिय नहीं है, वहां किसान बहुत कम कीमत पर

कृषि को लाभकारी बनाने में सट्टेबाजी की विफलता के कारण ही अमेरिका किसानों को भारी भरकम सब्सिडी प्रदान करता है। फूड बिल 2008 में पांच साल के लिए 307 अरब डॉलर की सब्सिडी का प्रावधान किया गया था।

गेहूं और धान बाजार में बेचने को मजबूर हैं। इस प्रकार एफसीआई तो पहले से ही मूल्य जोखिम प्रबंधन की जिम्मेदारी निभा रहा है।

अमेरिका के अनुभव से स्पष्ट हो जाता है कि इन आर्थिक जिम्मेदारियों को निभाने की सट्टा बाजार से की जा रही अपेक्षाएं महज खयाली पुलाव हैं। अमेरिका के शिकागो में विश्व का सबसे बड़ा कमोडिटी एक्सचेंज है, इसके बावजूद अमेरिका में सट्टेबाजी से किसानों का कोई भला नहीं हुआ। कृषि को लाभकारी बनाने में सट्टेबाजी की विफलता के कारण ही अमेरिका किसानों को भारी भरकम सब्सिडी प्रदान करता है। फूड बिल 2008 में पांच साल के लिए 307 अरब डॉलर (करीब 16 लाख करोड़ रुपये) की सब्सिडी का प्रावधान किया गया था। इसमें संदेह नहीं कि एफसीआई में भ्रष्टाचार व्याप्त है, किंतु इसे खत्म कर देना एक बड़े विनाश की ओर ले जाएगा। इससे भारत फिर से खाद्यान्न आयातक देश बन जाएगा और खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी। जाहिर है, इससे भुखमरी तो बढ़ेगी ही। ❑

सदस्यता संबंधी सूचना

मान्यवर,,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीघ्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि ''स्वदेशी पत्रिका'' के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है।

स्वदेशी पत्रिका	वार्षिक	आजीवन
हिन्दी	100/–	1000/–
अंग्रेजी	100/–	1000/–

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

पता : **स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22**

छोटे उद्योगों को समर्थन की दरकार

छोटे उद्योगों के लिए सरकार द्वारा ऋण राहत, प्रौद्योगिकी उन्नयन, विपणन, आधारभूत संरचनाओं और निर्यात क्षेत्र में बढ़ावा देने के ठोस प्रयास किए जाने चाहिए। निश्चित रूप से अब वैश्विक सुस्ती की चुनौतियों के बीच देश के छोटे उद्योगों को मुस्कुराहट देने के लिए ठोस एवं रणनीतिक प्रयास जरूरी हैं। ऐसा होने पर ही छोटे उद्योग देश की विकास दर को बढ़ाने तथा रोजगार सृजन में प्रभावी भूमिका निभा सकेंगे।

■ **जयंतीलाल भंडारी**

अक्टूबर 2012 में प्रकाशित विश्व बैंक की रिपोर्ट में कहा गया है कि छोटे उद्योगों के लिए सहूलियत के मामले में भारत 185 देशों की सूची में बहुत पीछे 132वें क्रम पर है। इस सूची में पाकिस्तान 107वां और नेपाल 108वां क्रम रखते हुए भारत से आगे हैं वैश्विक सुस्ती की चुनौतियों के बीच देश के छोटे उद्योगों को मुस्कुराहट देने के लिए ठोस एवं रणनीतिक प्रयास जरूरी हैं। ऐसा होने पर ही वे देश की विकास दर को बढ़ाने तथा रो जगार सृजन में प्रभावी भूमिका निभा सकेंगे।

हाल ही में भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने कहा है कि छोटे उद्योग देश की अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा हैं, इसलिए वैश्विक सुस्ती के वर्तमान दौर में तेजी से संकटग्रस्ट होते छोटे उद्योगों को बैंकों द्वारा ऋण देने में संजीदगी बरतकर राहत देना आवश्यक है। वस्तुतः छोटे उद्योग देश में विकास दर और रोजगार बढ़ाने के परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इस समय देश में छोटे उद्योगों की तकरीबन एक करोड़ तीस लाख इकाइयां कार्यरत हैं और इनमें लगभग चार करोड़ से अधिक लोग काम कर रहे हैं। छोटे उद्योगों का देश के औद्योगिक उत्पादन में 45 फीसद एवं निर्यात में 40 फीसद योगदान है। लेकिन फिलहाल स्थिति यह है कि इस समय देश में छोटे उद्योगों की एक तिहाई इकाइयां बीमार हैं। वैश्विक सुस्ती के कारण जैसे–जैसे छोटे उद्योगों का उत्पादन घट रहा है और लागत बढ़ रही है, वैसे–वैसे वहां कार्यरत कर्मचारियों के समक्ष रोजगार का संकट बढ़ रहा है।

छोटे उद्योगों की अधिकांश इकाइयां महंगे कर्ज, बिजली समस्या, मांग में कमी, खरीदारों से भुगतान रुकने, टैक्सेशन, बैंकिंग, वित्तीय और विपणन संबंधी परेशानियों का सामना कर रही हैं। छोटे उद्योगों के समक्ष एक बड़ी चुनौती ऋण पर बढ़ी हुई ब्याज दरें भी हैं। छोटे उद्योग अधिक ब्याज दरों के कारण कदम–कदम पर कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन

छोटे उद्योगों की अधिकांश इकाइयां महंगे कर्ज, बिजली समस्या, मांग में कमी, खरीदारों से भुगतान रुकने, टैक्सेशन, बैंकिंग, वित्तीय और विपणन संबंधी परेशानियों का सामना कर रही हैं। छोटे उद्योगों के समक्ष एक बड़ी चुनौती ऋण पर बढ़ी हुई ब्याज दरें भी हैं। छोटे उद्योग अधिक ब्याज दरों के कारण कदम–कदम पर कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं।

हमें चीन की तरह छोटे उद्योगों को नियम–कानूनों की सरलता और वित्तीय सहयोग के साथ सर्वोच्च प्राथमिकता देकर विकसित करना होगा। देश में छोटे उद्योगों को बीमारी से बचाने के लिए बैंकों को सार्थक भूमिका निभानी होगी। छोटे उद्योगों को यह वित्तीय मदद तब दी जानी चाहिए जबकि वह बीमार होने की शुरुआत में ही हों। हमें छोटे उद्योगों से जुड़े हुए निर्यात को दूसरे देशों में निर्यात उद्योगों को दी जा रही सुविधाओं के मद्देनजर प्रोत्साहित करना होगा।

(यूनिड) की रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत में छोटे उद्योगों के विकास में गिरावट की सबसे बड़ी वजह ब्याज दरों में लगातार हो रही बढ़ोतरी है। भारत में बीमार (सिक) होने के बाद सिर्फ एक फीसद छोटे उद्योगों की ही स्थिति बेहतर हो पा रही है, जबकि समर्थन देकर 60 फीसद छोटे उद्योगों की स्थिति बेहतर की जा सकती है। स्थिति यह भी है कि वे उद्योग जो निर्यातोन्मुखी हैं, ऊंची ब्याज दर से बुरी तरह प्रभावित हो रहे हैं। ऊंची ब्याज दरें भारत के निर्यात से जुड़े छोटे उद्योगों की मुश्किलें बढ़ाती हुई दिखाई दे रही हैं।

हालांकि भारत अपनी कृषि अर्थव्यवस्था, लोगों की बचत और मजबूत बैंकिंग व्यवस्था के कारण दोहरी मंदी से कम प्रभावित हो रहा है लेकिन चूंकि अमेरिका, भारत का सबसे बड़ा उद्योग व्यापार सहभागी है, इसलिए भारत के छोटे उद्योगों के निर्यात पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

उल्लेखनीय है कि भारत के आईटी व्यापार का 60 प्रतिशत अमेरिका से संबंधित है। भारत के कुल निर्यात का लगभग 35 प्रतिशत अमेरिका और यूरोप के बाजार में पहुंचता है। मंदी के कारण इन देशों में भारतीय छोटे उद्योगों के निर्यात संबंधित जो क्षेत्र सबसे ज्यादा प्रभावित हो रहे हैं, उनमें जेम एंड ज्वैलरी, लेदर, टेक्सटाइल, आईटी, फॉर्मा और कुछ अन्य सेवा क्षेत्र शामिल हैं।

अमेरिका और यूरोप में खर्चों में कटौती की जो प्रक्रिया चल रही है, उससे छोटे उद्योगों से जुड़े भारतीय निर्यातकों को मुसीबतों का सामना करना पड़ रहा है। इतना ही नहीं, नवम्बर 2012 में अमेरिका में चुनाव के बाद दूसरी बार राष्ट्रपति बने बराक अबामा ने अमेरिका के उद्योगों को संरक्षण देने की जो बात कही है, उसका प्रभाव भारत के छोटे उद्योगों के निर्यात पर भी और अधिक पड़ेगा। निःसंदेह दुनिया के दूसरे देशों की तुलना में भारत में छोटे उद्योग अधिक मुश्किलों का सामना कर रहे हैं।

ग्यारह विभिन्न मानकों पर आधारित इस रिपोर्ट में मुख्य रूप से कर्ज और बिजली मिलने में होने वाली सहूलियत, कर चुकाना, किसी निर्माण का परमिट, प्रॉपर्टी की रजिस्ट्री जैसी चीजें शामिल हैं।

रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत में छोटे उद्यमियों को कारोबार शुरू करने के लिए सुगम माहौल उपलब्ध नहीं है। इस रिपोर्ट के मुताबिक सुगम माहौल की दृष्टि से सिंगापुर पहले, हांगकांग दूसरे और न्यूजीलैंड तीसरे स्थान पर है।

विश्व बैंक की एक अन्य रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि जहां भारत में कई बड़ी औद्योगिक इकाइयां अपनी सालाना बिक्री का दो फीसद रिश्वत देने में खर्च करती हैं, वहीं किसी छोटी औद्योगिक इकाई को रिश्वत की मद में अपनी सालाना बिक्री का छह फीसद खर्च करना होता है।

देश में आमतौर पर किसी छोटे उद्यमी को साल में टैक्सेशन एवं विभिन्न 60 तरह की कानूनी कार्यवाहियों में 271 घंटों का समय लगाना होता है। इसकी तुलना में संयुक्त अरब अमीरात में किसी भी व्यवसायी को टैक्स एवं अन्य कानूनी कायरे के लिए वर्षभर में केवल 12 घंटे लगते हैं। ऐसे में देश के छोटे उद्योगों की कठिनाइयों को दूर करने के लिए अक्टूबर 2012 में केंद्र सरकार द्वारा सेबी के पूर्व चेयरमैन एम. दामोदरन की अध्यक्षता में गठित समिति की ओर उद्योग संबंधी राहत के लिए देश के छोटे उद्योगों की निगाहें लगी हुई हैं।

निःसंदेह दामोदरन समिति को छोटे उद्योगों से संबंधित नियम–कानूनों में सरलीकरण की राह पर आगे बढ़ना होगा।

खासतौर से प्रतिस्पर्धी निर्यातक देशों से मुकाबला करने के लिए निर्यातोन्मुखी छोटी औद्योगिक इकाइयों के लिए ब्याज दरें घटानी होंगी। हमारे छोटे उद्योगों को निर्यात बाजार में चीन से मिल रही निर्यात चुनौतियों का भी सामना करना है। ऐसे में निर्यात को प्रोत्साहन और व्यापार घाटे को कम करने के लिए सरकार को छोटे निर्यात कारोबारियों को निर्यात के लिए और कारगर वित्तीय सुविधा मुहैया करानी चाहिए।

हमें चीन की तरह छोटे उद्योगों को नियम–कानूनों की सरलता और वित्तीय सहयोग के साथ सर्वोच्च प्राथमिकता देकर विकसित करना होगा। देश में छोटे उद्योगों को बीमारी से बचाने के लिए बैंकों को सार्थक भूमिका निभानी होगी। छोटे उद्योगों को यह वित्तीय मदद तब दी जानी चाहिए जबकि वह बीमार होने की शुरुआत में ही हों। हमें छोटे उद्योगों से जुड़े हुए निर्यात को दूसरे देशों में निर्यात उद्योगों को दी जा रही सुविधाओं के मद्देनजर प्रोत्साहित करना होगा।

खासतौर से प्रतिस्पर्धी निर्यातक देशों से मुकाबला करने के लिए निर्यातोन्मुखी छोटी औद्योगिक इकाइयों के लिए ब्याज दरें घटानी होंगी। हमारे छोटे उद्योगों को निर्यात बाजार में चीन से मिल रही निर्यात चुनौतियों का भी सामना करना है। ऐसे में निर्यात को प्रोत्साहन और व्यापार घाटे को कम करने के लिए सरकार को छोटे निर्यात कारोबारियों को निर्यात के लिए और कारगर वित्तीय सुविधा मुहैया करानी चाहिए।

हमारे छोटे उद्योगों को निर्यात बाजार में चीन से मिल रही निर्यात चुनौतियों का भी सामना करना है। ऐसे में निर्यात को प्रोत्साहन और व्यापार घाटे को कम करने के लिए सरकार को छोटे निर्यात कारोबारियों को निर्यात के लिए और कारगर वित्तीय सुविधा मुहैया करानी चाहिए।

सचमुच वर्ष 2008 की मंदी से भी अधिक चिंताजनक 2012 की वैश्विक मंदी के दुष्परिणामों से अपने छोटे उद्योग–कारोबार को बचाने के लिए जिस तरह अमेरिकी और यूरोपीय बैंक सस्ती ब्याज दरों की बौछार कर रहे हैं वैसी अपेक्षाएं भारत के छोटे उद्योग–कारोबार जगत द्वारा भी की जा रही हैं।

यह जरूरी है कि छोटे उद्योगों को अनावश्यक कानूनी नियंत्रण और इंस्पेक्टर राज से राहत दी जाए।

छोटे उद्यमियों को उद्योग संबंधी कानूनी कार्यवाहियों के लिए अदालतों में चक्कर काटने से बचाने और विवादों को कम खर्च में सुलझाने के लिए गठित की गई फैसिलिटेशन काउंसिलों को राज्य सरकारों के सहयोग से सशक्त बनाया जाना चाहिए।

छोटे उद्योगों के लिए सरकार द्वारा ऋण राहत, प्रौद्योगिकी उन्नयन, विपणन, आधारभूत संरचनाओं और निर्यात क्षेत्र में बढ़ावा देने के ठोस प्रयास किए जाने चाहिए। निश्चित रूप से अब वैश्विक सुस्ती की चुनौतियों के बीच देश के छोटे उद्योगों को मुस्कुराहट देने के लिए ठोस एवं रणनीतिक प्रयास जरूरी हैं। ऐसा होने पर ही छोटे उद्योग देश की विकास दर को बढ़ाने तथा रोजगार सृजन में प्रभावी भूमिका निभा सकेंगे। ❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका सम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते हैं कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

हमारा पता है :–

संपादक

स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

मुद्दा

बिजली संकट से निपटने की राह

बिजली के विभिन्न स्रोतों का सही संतुलन बनाना है तो पहले की अपेक्षा अक्षय ऊर्जा स्रोतों पर कहीं अधिक ध्यान देना होगा। केवल व्यापारिक बिक्री स्तर की बिजली और डीजल उपलब्धि पर नहीं, अपितु ऊर्जा के अन्य तौर–तरीकों पर भी समुचित ध्यान देना चाहिए। गांवों में अनेक कार्यों के लिए ऊर्जा के बड़े स्रोत परंपरा में रहे हैं, उनकी उपेक्षा क्यों हो रही है? विभिन्न क्षेत्रों की परंपरागत ऊर्जा तकनीकों और तकनीकी कुशलता रखने वाले गांववासियों के अनुभव का भरपूर उपयोग करना चाहिए।

■ भारत डोगरा

देश में कहीं बिजली की कमी तो कहीं अधिक कीमत लोगों में असंतोष का बड़ा कारण बनती जा रही है। एक तरफ जहां बिजली उत्पादन बढ़ाने की दुहाई दी जाती है, वहीं दूसरी ओर बिजली के वर्तमान बड़े स्रोत विस्थापन, संभावित खतरों और पर्यावरणीय दुष्परिणामों के कारण विवादों में हैं। फिर चाहे वे ताप बिजलीघर हों या बड़े बांध या परमाणु संयत्र।

हाल ही में देश की राजधानी में यह विवाद उस समय तेज हो गए जब बिजली की बढ़ी कीमतों के खिलाफ भाजपा और इंडिया अगेंस्ट करप्शन ने तीखा विरोध किया। कई जगहों पर बिजली के बिल जला दिए गए। आनान–फानन में मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने कह दिया कि जो बिल नहीं दे सकते वे बिजली का कनेक्शन कटवा दें। बिजली बुनियादी जरूरत है। मुख्यमंत्री इसे किसी से कैसे छीन सकती हैं? कम से कम इतनी बिजली तो दिल्ली के सभी परिवारों को चाहिए कि लाइट व पंखे की जरूरत पूरी हो सके।

यदि कुछ परिवारों की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं है कि वे इतनी बिजली का बिल भी भर सकें तो यह सिर्फ उनकी चिंता नहीं है। यह किसी जन–पक्षीय सरकार की भी चिंता होनी चाहिए। सभी नागरिकों की बुनियादी जरूरतें पूरी करना सरकार की जिम्मेदारी है। इसलिए हमें बिजली की उपलब्धता बढ़ाने की ऐसी राह निकालनी है जो सस्ती भी हो और जिससे पर्यावरणीय खतरों और विस्थापन को भी न्यूनतम रखा जा सके।

पर्वतीय क्षेत्रों में, विशेषकर हिमालय के गांवों में, सदियों से पनचक्की का उपयोग आटा पीसने के लिए होता रहा है। प्रायः लगभग सात फीट के आसपास के पानी गिरने की जगह विभिन्न छोटी नदी–नालियों के बहते पानी में निहित ऊर्जा का प्रयोग चक्की चलाने के लिए किया जाता है। इस पनचक्की को घाट, घट या अन्य नामों से पर्वतीय क्षेत्रों में जाना जाता है। यह परंपरागत तकनीक की उत्कृष्टता और अनुकूलता का एक सुंदर उदाहरण माना गया है।

पिछले दिनों पूरे उत्तर भारत में ब्लैक आउट के बाद ऐसी संभावनाओं से भविष्य में बचने के लिए कई महत्वपूर्ण सुझाव आए। ट्रिपिंग की संभावना कम करने के लिए आधुनिक तकनीकों का बेहतर उपयोग करने के साथ किसी ग्रिड से बिजली लेने वाले विभिन्न राज्यों में बेहतर अनुशासन की जरूरत पर जोर दिया गया है। क्योंकि जब तक बिजली की मांग और आपूर्ति में

असंतुलन रहेगा तब तक बिजली संकट दूर नहीं किया जा सकता है।

इस असंतुलन को कम करने के कई तरीके हैं। बिजली उत्पादन व आपूर्ति तेजी से बढ़ाने की योजनाएं सरकार के पास हैं, लेकिन इनमें एक बड़ी समस्या यह है कि पर्यावरण विनाश व विस्थापन की गंभीर समस्याएं इनके साथ जुड़ी हैं। इसलिए चुनौती यही है इनसे बचते हुए कैसे बिजली की कमी को पूरा किया जाए। इसके लिए एक बड़ी जरूरत बिजली की अनावश्यक खपत से बचने की है। अत्यधिक खपत के स्थान पर वास्तविक न्यायसंगत जरूरत को ही सरकारी नीतियों में प्रोत्साहित किए जाने की जरूरत है।

पर्यावरण की तबाही के बिना बिजली की जरूरतों को पूरा करने में कर्नाटक में प्रो. अमूल्य के.एन. रेयस्री और उनके साथियों ने अमूल्य कार्य किया है। उनके अध्ययनों ने बताया कि बिजली की तमाम वास्तविक जरूरतें पूरी करते हुए भी कर्नाटक में बिजली की जरूरत के अगले 15 वर्ष के जो सरकारी अनुमान हैं, उनमें 44 प्रतिशत तक की कमी की जा सकती है। गांववासियों को पर्याप्त मात्रा में बिजली उपलब्ध करवाते हुए भी यह बचत हो सकती है।

प्रो. अमूल्य के इस अध्ययन से पता चलता है कि बिजली की गैर–जरूरी खपत में कमी करने की कितनी संभावना है। प्रो. अमूल्य और उनके साथियों ने जो वैकल्पिक योजना तैयार की है उसमें विकेंद्रित बिजली उत्पादन, बिजली के उपयोग को बेहतर करने और उत्पादन के बेहतर विकल्प खोजने पर समुचित ध्यान दिया गया है।

दूसरा इसमें पर्यावरण की तबाही करने वाली तकनीकों और परियोजनाओं को त्याग दिया गया है। इस अध्ययन ने बताया कि बिजली की सभी लोगों की जरूरतों को कैसे पूरा किया जा सकता है, जिससे पर्यावरण की क्षति को न्यूनतम किया जा सके और सरकार की मौजूदा योजनाओं की अपेक्षा बजट में भी 40 प्रतिशत की कमी की जा सकती है। इस तरह की वैकल्पिक योजनाएं सभी राज्यों के संदर्भ में बननी चाहिए, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि पर्यावरण की क्षति और उत्पादन खर्च को न्यूनतम रखते हुए बिजली के संकट का समाधान कैसे किया जा सकता है।

ऐसे किसी भी प्रयास में विकेंद्रित बिजली उत्पादन, विकल्पों की तलाश, अनावश्यक उपयोग को कम करने, परियोजनाओं के पक्षपातविहीन और संतुलित मूल्यांकन को बेहतर बनाने की ओर समुचित ध्यान देना होगा। विभिन्न बिजली परियोजनाओं का यदि शुरू से सावधानी और निष्पक्षता से अध्ययन किया जाए तो प्राथमिकता के आधार पर सबसे अनुकूल योजनाओं की सूची बनाई जा सकती है। बिजली के विभिन्न स्रोतों का सही संतुलन बनाना है तो पहले की अपेक्षा अक्षय ऊर्जा स्रोतों पर कहीं अधिक ध्यान देना होगा। केवल व्यापारिक बिक्री स्तर की बिजली और डीजल उपलब्धि पर नहीं, अपितु ऊर्जा के अन्य तौर–तरीकों पर भी समुचित ध्यान देना चाहिए।

गांवों में अनेक कार्यों के लिए ऊर्जा के बड़े स्रोत परंपरा में रहे हैं, उनकी उपेक्षा क्यों हो रही है? विभिन्न क्षेत्रों की परंपरागत ऊर्जा तकनीकों और तकनीकी कुशलता रखने वाले गांववासियों के अनुभव का भरपूर उपयोग करना चाहिए।

उदाहरण के लिए ग्रामीण वैज्ञानिक मंगल सिंह की पेटेंट प्राप्त मंगल टर्बाइन से सिंचाई या पेयजल की जरूरत का पानी उठाने का काम बहुत कम लागत पर बिना बिजली और डीजल के किया जा सकता है। केवल इस उपकरण से ही राष्ट्रीय स्तर पर बिजली और ऊर्जा की लागत में करोड़ों रुपए की बचत हो सकती है। पर्वतीय क्षेत्रों में, विशेषकर हिमालय के गांवों में, सदियों से पनचक्की का उपयोग आटा पीसने के लिए होता रहा है। प्रायः लगभग सात फीट के आसपास के पानी गिरने की जगह विभिन्न छोटी नदी–नालियों के बहते पानी में निहित ऊर्जा का प्रयोग चक्की चलाने के लिए किया जाता है। इस पनचक्की को घाट, घट या अन्य नामों से पर्वतीय क्षेत्रों में जाना जाता है। यह परंपरागत तकनीक की उत्कृष्टता और अनुकूलता का एक सुंदर उदाहरण माना गया है।

ग्रामीण वैज्ञानिक मंगल सिंह ने घाट के लाभ को मैदानी क्षेत्रों तक पहुंचाने के लिए भी एक सरल तकनीक सामने रखी है, जिसमें पंप सेट से सिंचाई करते समय भी इस पानी की धार को कुछ परिवर्तित तरह की पनचक्की पर गिराकर चक्की से आटा पीसा जा सकेगा। यह अतिरिक्त भूमिका निभाने के बाद पानी पहले की तरह सिंचाई के उपयोग में आता रहेगा।

दूसरे शब्दों में कहें तो जिस ऊर्जा का उपयोग केवल सिंचाई के लिए हो रहा था, पंपसेट के माध्यम से अब उसी ऊर्जा से आटा भी पीसा जा सकेगा। इसके अतिरिक्त मंगल सिंह ने भैरन, पंखी रहित एक ऐसी परिवर्तित पनचक्की का सुझाव भी दिया है, जिसमें पूली लगाई जाएगी और पूली पर पट्टे चढ़ाकर घाट चलेगी। इस परिवर्तित रूप में मंगल टर्बाइन या मंगल व्हील से 3–6 पनचक्कियां एक साथ चलाई जा सकेंगी। जरूरत इस तरह के आविष्कारों को सरकारी योजनाओं में शामिल कर उन्हें बढ़ावा देने की है। ❑

समस्या

कसाब के बाद अब भी कई सवाल

देश के हर नागरिक को यह सोचना चाहिए कि आखिर देश के दुश्मनों को देश के भीतर ही कौन शह दे रहा है? क्यों पनप रहा है आतंकवाद? हमारे ही आंगन में कौन बो रहा है आतंकवाद के बीज? देश के दुश्मनों से सीमा पर लड़ना आसान है, लेकिन देश के भीतर ही छिपे दुश्मनों से लड़ना बहुत मुश्किल है।

■ महेश परिमल

आतंकवादी अजमल कसाब को आखिर फांसी दे दी गई, लेकिन इससे यह समझना भूल होगी कि आतंकवाद खत्म हो गया। कसाब खत्म हुआ है, आतंकवाद नहीं। अभी अफजल गुरु जिंदा है। इसके अलावा ऐसे कई आतंकवादी जिंदा हैं, जो या तो जेल में हैं या फिर अपने घर में ही जयचंद बनकर रह रहे हैं। जो जेल में हैं, उनका अंजाम तय है, पर जो घर के भीतर हैं, ऐसे लोग अधिक खतरनाक हैं। हमारे न्यायतंत्र की प्रक्रिया को देखकर ऐसा नहीं लगता कि कसाब को फांसी के बाद आतंकवादी हमारी न्याय व्यवस्था से डरेंगे।

अब आतंकवादी यह अच्छी तरह से समझने लगे हैं कि भारत में किसी भी प्रकार की आतंकी कार्रवाई की भी जाए तो उसका फैसला देर से होता है और उस पर अमल होने में तो और भी देर होती है। कसाब जब तक जिंदा था, तो पाकिस्तानी राजनीति का प्यादा था, लेकिन मरने के बाद वह भारतीय राजनीति का प्यादा बन गया है। संसद का शीतकालीन सत्र, गुजरात का विधासभा चुनाव, एफडीआई पर विपक्ष का हावी होना, इस बात का परिचायक है कि आखिर सरकार को यही करना था, तो चार साल तक इंतजार क्यों किया?

क्या यही जल्दबाजी अफजल गुरु के लिए नहीं दर्शाई जा सकती थी? कसाब तो सर पर कफन बांधकर मरने के लिए ही आया था, उसे तो मरना ही था। पर उसे जिंदा रखने के लिए जो 30 करोड़ रुपये खर्च हुए, उसका क्या? काफी लोग जानते होंगे कि जेल में बंद आतंकवादियों पर हमारे देश का कितना धन बर्बाद हो रहा है।

26/11 के दौरान जो आतंकवादी हमारे देश में घुस आए थे, कसाब को छोड़कर सभी मारे गए थे। इन आतंकवादी की लाशें कई महीनों तक सुरक्षित रखी गई थीं, जिस पर करोड़ों रुपये खर्च हो हुए। कसाब के इलाज पर भी लाखों रुपये खर्च हुए।

कहा तो यह भी जाता है कि कसाब की सुरक्षा और उसके खाने–पीने के इंतजाम में जितना धन खर्च हुआ है, उतना तो 26/11 के दौरान शहीद हुए लोगों को मुआवजे के रूप में भी नहीं मिला है। क्या यह शर्म की बात नहीं है कि इस देश में वीरों से अधिक सम्मान तो आतंकवादियों–अपराधियों को मिलता है। आतंकवादियों को दी जाने वाली सुविधा के सामने सीमा पर तैनात हमारे जांबाजों को मिलने वाली सुविधा तो बहुत ही बौनी है। आखिर आतंकवादी हमारे लिए इतने अधिक

खुफिया विभाग (आइबी) के पूर्व प्रमुख और विवेकानंद फाउंडेशन के निदेशक अजीत डोवाल का मानना है कि आतंकवाद से सबसे अधिक पीड़ित होने के बावजूद भारत आतंकियों के खिलाफ सख्त रवैया अपनाने में विफल रहा है।

महत्वपूर्ण क्यों होने लगे?

अफजल की बारी कब हमें गर्व होना चाहिए शहीद नानक चंद की विधवा गंगा देवी के जज्बे पर, जिन्होंने प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह को पत्र लिखकर कहा है कि अफजल गुरु को उन्हें सौंप दिया जाए। अगर सरकार में हिम्मत नहीं है तो वह उसे फांसी दे देगी। गंगा देवी पर हमें इसलिए भी गर्व करना चाहिए कि उन्होंने पति के मरणोपरांत मिलने वाला कीर्ति चक्र भी लौटा दिया। उनका कहना था कि अफजल को फांसी दिए जाने तक वे कोई सम्मान ग्रहण नहीं करेंगी। एक शहीद की विधवा को और क्या चाहिए। लोग न्याय की गुहार करते रहते हैं, उन्हें न्याय नहीं मिलता। पर एक शहीद की विधवा यदि प्रधानमंत्री से न्याय की गुहार करे तो क्या उसे भी इस देश में न्याय नहीं मिलेगा?

वर्ग भेद की राजनीति में उलझी देश की गठबंधन सरकार से किसी प्रकार की उम्मीद करना ही बेकार है। शहीद की विधवाओं की गुहार संसद तक पहुंचते–पहुंचते अनसुनी रह जाती है। जहां वोट की राजनीति होती हो, वहां कुछ बेहतर हो भी नहीं सकता। शहीद नानक चंद की विधवा ने प्रधानमंत्री को लिखे पत्र में कहा है, मनमोहन सिंह जी अगर आपकी सरकार में अफजल गुरु को फांसी देने की हिम्मत नहीं है या आपको जल्लाद नहीं मिल रहे तो यह काम आप मुझे सौंप दें। मैं शहीद की पत्नी हूं। देश के खिलाफ आंख उठाने वाले को क्या सजा दी जाए, मुझे और मेरे परिवार को मालूम है। मैं संसद के 13 नंबर गेट पर जहां मेरे पति शहीद हुए थे, वहीं अफजल को फांसी दूंगी। राठधाना गांव में अपने घर पर शहीद पति की प्रतिमा के सामने बैठी गंगा देवी ने कहा कि हमले के 11 साल बाद भी अफजल और उसके सभी साथी सुरक्षित हैं। देश के लिए इससे बड़ी शर्म की बात और क्या हो सकती है?

देश के हर नागरिक को यह सोचना चाहिए कि आखिर देश के दुश्मनों को देश के भीतर ही कौन शह दे रहा है? क्यों पनप रहा है आतंकवाद? हमारे ही आंगन में कौन बो रहा है आतंकवाद के बीज? देश के दुश्मनों से सीमा पर लड़ना आसान है, लेकिन देश के भीतर ही छिपे दुश्मनों से लड़ना बहुत मुश्किल है।

आतंकी और भी वर्ष 2001 में संसद पर हमले के आरोपी अफजल गुरु की फांसी की सजा पर 2005 में सुप्रीम कोर्ट द्वारा मुहर लगने के सात साल बाद भी अमल नहीं हो पाया है, जबकि 2000 में दिल्ली के लालकिले में घुसकर सेना के तीन जवानों की हत्या और 11 को घायल करने वाले लश्कर–ए–तैयबा के आतंकी मोहम्मद आरिफ की फांसी की सजा पर अब तक अदालती कार्रवाई जारी है। वर्ष 2005 में छह अन्य आरोपियों समेत आरिफ को दोषी मानते हुए ट्रॉयल कोर्ट ने उसे फांसी की सजा सुनाई। 2007 में हाईकोर्ट ने अन्य आरोपियों को बरी करते हुए आरिफ के खिलाफ फांसी की सजा बरकरार रखी। उसके बाद सुप्रीम कोर्ट में मामला विचाराधीन है।

इसी तरह 2002 में गुजरात स्थित अक्षरधाम मंदिर पर हमला कर 31 लोगों को मौत के घाट उतारने वाले लश्कर आतंकियों को फांसी देने का मामला भी सुप्रीम कोर्ट में लंबित है। वर्ष 2005 में दीपावली के ठीक दो दिन पहले यानी धनतेरस पर दिल्ली के बाजारों में, 2006 में बनारस के संकटमोचन मंदिर और उसी साल मुंबई की लोकल ट्रेनों में बम विस्फोट करने वाले आतंकियों को सजा मिलने में अभी सालों लग सकते हैं, जबकि इन आतंकी हमलों में 300 से अधिक लोग मारे गए थे।

खुफिया विभाग (आइबी) के पूर्व प्रमुख और विवेकानंद फाउंडेशन के निदेशक अजीत डोवाल का मानना है कि आतंकवाद से सबसे अधिक पीड़ित होने के बावजूद भारत आतंकियों के खिलाफ सख्त रवैया अपनाने में विफल रहा है। अजमल कसाब को जब फांसी की सजा मुकर्रर हुई, उसके बाद संसद पर हमला करने वाले अफजल गुरु को फांसी पर चढ़ाने के लिए दबाव बनने लगा। लेकिन इस बीच जो बयानबाजी हुई और फाइल इधर से उधर हुई, उससे यह स्पष्ट हो गया कि कई राजनीतिक शक्तियां अफजल गुरु को बचाने में लगी हुई हैं। यह बात अब किसी से छिपी नहीं है कि अफजल को बचाने में कौन–कौन लगे हुए हैं?

अब तो यह भी साबित हो गया है कि जिन अफसरों ने अफजल की फाइल को अनदेखा किया, उन सभी को पदोन्नति मिली। इसका आशय यही है कि कई राजनीतिक शक्तियां अफजल गुरु को बचाने में लगी हैं।

एक फाइल चार साल तक 200 मीटर का फासला भी तय न कर पाए, इससे बड़ी बात और क्या हो सकती है? इसे समझते हुए उधर अफजल गुरु यह कहा रहा है कि मैं अकेलेपन से बुरी तरह टूट गया हूं। मुझे जल्द से जल्द फांसी की सजा दो। निश्चित रूप से यह भी उसका एक पैंतरा है। लेकिन इतना तो तय है कि अफजल पर किसी भी तरह की कार्रवाई करने में केंद्र सरकार के पसीने छूट रहे हैं। देश के हमारे संविधान पर भी उंगली उठ रही है, सो अलग। आखिर क्यों हैं इतने लचर नियम कायदे और क्यों हैं इतने लाचार हमारे राष्ट्रपति! ❑

गर्म दुनिया में जीवन की कवायद

प्राकृतिक आपदाओं से मुकाबला करना कोई आसान काम नहीं है, लेकिन ऐसे हालात प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन और आधुनिक तकनीक के कारण ही पैदा हो रहे हैं। इसलिए हम एक महाविनाश की ओर जा रहे हैं, जिसकी कल्पना पुराणों में कलियुग के अंत के रूप में पहले से ही घोषित की जा चुकी है। इसके लिए जिम्मेदार कोई और नहीं, हम ही हैं।

■ निरंकार सिंह

कहा जा रहा है कि हमारी दुनिया का अंत अब करीब आ गया है। दुनियाभर के देश अपने विकास के लिए जिस आधुनिक रास्ते पर चल रहे हैं, वह विकास नहीं, महाविनाश का रास्ता है। इसी का नतीजा है कि आज हमारे सांस लेने के लिए न तो शुद्ध हवा है और न पीने के लिए साफ पानी ही बचा है। अब इससे भी बड़ा खतरा आने वाला है। धरती का तापमान जिस रफ्तार से बढ़ रहा है, वह इस सदी के अंत तक छह डिग्री सेल्सियस तक बढ़ जाएगा। पेट्रोलियम पदार्थों का विकल्प ढूंढ़ने में विफल दुनियाभर की सरकारें इन हालात के लिए जिम्मेदार हैं।

प्राइस वाटरहाउस कूपर्स के अर्थशास्त्रियों ने अपनी एक रिपोर्ट में चेतावनी दी है कि वर्ष 2100 तक वैश्विक औसत तापमान 2 डिग्री सेल्सियस के अंदर

प्रलय दिखा सकता है।

ताजा शोध के अनुसार समुद्र का जल स्तर एक मीटर तक बढ़ सकता है। इससे कई देश और भारत के तटीय नगर डूब जाएंगे। दुनिया इसी सदी में एक खतरनाक जलवायु परिवर्तन का सामना करने जा रही है। भारत समेत पूरी दुनिया का तापमान तक रखना असंभव हो गया है। इसके घातक नतीजे दुनिया को भोगने होंगे। वैज्ञानिकों ने जलवायु परिवर्तन की किसी घातक और अविश्वसनीय स्थिति को टालने के लिए वैकल्पिक तापमान का औसत दो डिग्री सेल्सियस से अधिक नहीं बढ़ने देने का लक्ष्य तय किया था।

तय हुआ था कार्बन का अत्यधिक उत्सर्जन करने वाले ईंधन का कम प्रदूषण फैलाने वाला वैकल्पिक ईंधन तलाशा जाए, पर संयुक्त राष्ट्र के अंतरसरकारी पैनल के मुताबिक यह लक्ष्य हासिल करने के लिए अब काफी देर हो चुकी है। 2 डिग्री सेल्सियस तापमान का लक्ष्य हासिल करने के लिए वैश्विक अर्थव्यवस्था को अगले 39 सालों में कमोबेश 5.1 फीसद प्रति वर्ष की दर से पूरी तरह कार्बन रहित बनाना होगा।

द्वितीय विश्व युद्ध खत्म होने के बाद से दुनिया ने इस लक्ष्य को कभी छुआ तक नहीं है। अगर कार्बन रहित कामकाज की दर को दोगुना भी कर दिया जाए तो भी इस सदी के अंत तक निरंतर कार्बन उत्सर्जन के कारण 6 डिग्री सेल्सियस तक तापमान और बढ़ जाएगा। यदि अभी भी 2 डिग्री के लक्ष्य का 50 फीसद प्रयास भी किया जाए तो कार्बन रहित वातावरण में छह स्तरीय सुधार हो सकता है। अब हम किसी खतरनाक परिवर्तन से बचने की कगार को तो पार कर ही चुके हैं। इसलिए हमें एक गर्म दुनिया में खुद को बनाए रखने की योजना बनानी होगी।

वर्ष 2007 में जलवायु परिवर्तन पर अंतरसरकारी पैनल के अनुमान से दोगुनी तेजी से ध्रुवों पर बिछी बर्फ की चादर पिघल रही है। वैज्ञानिकों ने इस बार आर्कटिक समुद्र और ग्रीनलैंड के आसपास की बर्फ, मिट्टी की नमी और भूजल खनन का भी अध्ययन किया है। इस अध्ययन के अनुसार

लगातार पिघल रही आर्कटिक की बर्फ के कारण केवल समुद्र का जल स्तर ही नहीं बढ़ रहा, बल्कि पूरे आर्कटिक क्षेत्र का तापमान भी तेजी से बढ़ रहा है। इससे उत्तरी कनाडा और ग्रीनलैंड के आसपास की बर्फ पिघलती जा रही है। जब समुद्र की बर्फ पिघलती है तो आर्कटिक से अधिक मात्रा में मीठे जल का स्राव होने लगता है। इसकी जगह बाद में दक्षिण के नमकीन और गर्म पानी के स्रोत ले लेते हैं। गर्म पानी से आर्कटिक की बर्फ पिघलती है और समुद्र की सतह से बर्फ हटने से सूरज की किरणें सीधे अंदर पहुंचने लगती हैं, जिससे समुद्र का पानी और गर्म होने लगता है। पानी का तापमान बढ़ने के साथ ही बर्फ की परत आगे खिसक रही है। ग्लेशियर के पिछले चक्र में ग्रीनलैंड और अंटार्कटिक में समुद्र का जल स्तर दस मीटर तक बढ़ा था, लेकिन ऐसा होने में सदियां लगीं। अब यह जल स्तर ग्लोबल वार्मिंग के कारण और तेजी से बढ़ रहा है। इसका सबसे ज्यादा दुष्प्रभाव सबसे ज्यादा एशियाई देशों पर पड़ेगा।

अगले 200 सालों में ग्लोबल वार्मिंग के कारण भारत को सर्वाधिक प्रभावित करने वाली मानसून प्रणाली बहुत कमजोर पड़ जाएगी। इससे बारिश की अत्यधिक कमी होगी, जबकि अपने देश में आज भी खेती पूरी तरह मानसून पर ही निर्भर है। साथ ही देश के मौसमों में भी इसमें अमूलचूल परिवर्तन होने की पूरी आशंका है।

एक ताजा शोध में वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि आने वाले दो शतकों में बारिश 40–70 फीसद तक कम हो जाएगी। इससे मानसूनी बारिश से आने वाला ताजा पानी देशवासियों के लिए कम पड़ेगा। खेतों की सिंचाई के लिए भी पानी नहीं होगा। इससे देश में जल की ही नहीं, खाद्यान्नों की

ग्लेशियर के पिछले चक्र में ग्रीनलैंड और अंटार्कटिक में समुद्र का जल स्तर दस मीटर तक बढ़ा था, लेकिन ऐसा होने में सदियां लगीं। अब यह जल स्तर ग्लोबल वार्मिंग के कारण और तेजी से बढ़ रहा है। इसका सबसे ज्यादा दुष्प्रभाव सबसे ज्यादा एशियाई देशों पर पड़ेगा।

भी कमी हो जाएगी। भारत में मानसून जून से सितंबर तक चार महीने रहता है। ये मौसम देश की सवा अरब आबादी के लिए पर्याप्त मात्रा में धान, गेहूं और मक्का जैसी उपयोगी फसलें उगाने के लिए जरूरी होते हैं। ये सारी प्रमुख फसलें मानसूनी बारिश पर ही निर्भर हैं। दक्षिण–पश्चिम का यह मानसून देश में 70 फीसद बारिश के लिए जिम्मेदार है।

पोस्टडैम इंस्टीट्यूट फॉर क्लाइमेट इंपैक्ट रिसर्च के अनुसंधानकर्ताओं ने अपने ताजा शोध में पाया कि मानव जाति 21वीं सदी के अंत तक पहुंचने की कगार पर है। 22वीं सदी में ग्लोबल वार्मिंग के कारण दुनिया का तापमान हद से ज्यादा बढ़ चुका होगा। एन्वायरमेंटल रिसर्च सेंटर नाम की पत्रिका में प्रकाशित इस शोध में बताया गया है कि बसंत ऋतु में प्रशांत क्षेत्र के वाकर

अगले 200 सालों में ग्लोबल वार्मिंग के कारण भारत को सर्वाधिक प्रभावित करने वाली मानसून प्रणाली बहुत कमजोर पड़ जाएगी। इससे बारिश की अत्यधिक कमी होगी, जबकि अपने देश में आज भी खेती पूरी तरह मानसून पर ही निर्भर है। साथ ही देश के मौसमों में भी इसमें अमूलचूल परिवर्तन होने की पूरी आशंका है।

सरकुलेशन की आवृत्ति बढ़ सकती है। इसलिए मानसूनी बारिश पर इसका बड़ा फर्क पड़ सकता है।

वाकर सरकुलेशन पश्चिमी हिंद महासागर में अक्सर उच्च दबाव लाता है, लेकिन जब कई सालों में अल नीनो उत्पन्न होता है तब दबाव का यह पैटर्न पूर्व की ओर खिसकता जाता है। इससे भारत के थल क्षेत्र में दबाव आ जाता है और मानसून का इलाके में दमन हो जाता है। यह स्थिति खासकर तब उत्पन्न होती है, जब बसंत में मानसून विकसित होना शुरू होता है। अनुसंधानकर्ताओं के अनुसार भविष्य में जब तापमान और अधिक बढ़ जाएगा तब वाकर सरकुलेशन औसत रहेगा और दबाव भारत के थल क्षेत्र पर ही पड़ेगा। इससे अल नीनो भी नहीं बढ़ पाएगा।

परिणामस्वरूप मानसून प्रणाली विफल हो जाएगी और सामान्य बारिश के मुकाबले भविष्य में 40–70 फीसद ही बारिश होगी। भारतीय मौसम विभाग ने सामान्य बारिश का पैमाना 1870 के शतक के अनुसार बनाया था। मानसूनी बारिश में कमी हर जगह समान रूप से नहीं होगी। जलवायु परिवर्तन के कारण मानसूनी बारिश कम होने से भी ज्यादा भयावह स्थितियां पैदा हो सकती हैं। इसलिए हमें एक ऐसी दुनिया में जीने की तैयारी कर लेनी चाहिए, जहां सब कुछ हमारे प्रकिूल होगा।

प्राकृतिक आपदाओं से मुकाबला करना कोई आसान काम नहीं है, लेकिन ऐसे हालात प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन और आधुनिक तकनीक के कारण ही पैदा हो रहे हैं। इसलिए हम एक महाविनाश की ओर जा रहे हैं, जिसकी कल्पना पुराणों में कलियुग के अंत के रूप में पहले से ही घोषित की जा चुकी है। इसके लिए जिम्मेदार कोई और नहीं, हम ही हैं। ❑

दोहा में कुछ हाथ न आया

जहां पांच सितारा होटलों में होने वाली यूएनएफसीसीसी की ये वार्ताएं लगातार नाकामयाब हो रही हैं, वहीं ग्लोबल वार्मिंग के लिए जिम्मेदार गैसें अपने रिकॉर्ड स्तर पर पहुंच चुकी हैं। विश्व मौसम संगठन के आंकड़ों के मुताबिक, 1990 से 2011 के बीच कार्बन डाई ऑक्साइड और तापमान में बढ़ोतरी करने और वातावरण में लंबे समय तक रहने वाली दूसरी गैसों की वजह से हमारी जलवायु की उष्णता में 30 प्रतिशत का इजाफा हुआ है।

■ सुमन सहाय

हाल ही में दोहा में जलवायु परिवर्तन को लेकर चल रही वार्ताओं का एक और दौर बगैर किसी नतीजे के समाप्त हो गया। सच्चाई तो यह है कि कोई यह उम्मीद नहीं कर रहा था कि इस बैठक में ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन के लिए जिम्मेदार ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती लाने पर कोई समझौता हो पाएगा।

पिछले कुछ समय से यूनाइटेड नेशंस फ्रेमवर्क कनवेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज (यूएनएफसीसीसी) की मुहिम के तहत होने वाली ये वार्ताएं कुछ महीनों के अंतराल पर भरपूर तड़क–भड़क के साथ आयोजित होती रही हैं। लेकिन फिर भी इनसे अपेक्षित नतीजे नहीं मिल सके हैं।

जहां पांच सितारा होटलों में होने वाली यूएनएफसीसीसी की ये वार्ताएं लगातार नाकामयाब हो रही हैं, वहीं ग्लोबल वार्मिंग के लिए जिम्मेदार गैसें अपने रिकॉर्ड स्तर पर पहुंच चुकी हैं। विश्व मौसम संगठन के आंकड़ों के मुताबिक, 1990 से 2011 के बीच कार्बन डाई ऑक्साइड और तापमान में बढ़ोतरी करने और वातावरण में लंबे समय तक रहने वाली दूसरी गैसों की वजह से हमारी जलवायु की उष्णता में 30 प्रतिशत का इजाफा हुआ है।

कुछ हफ्ते पहले जारी की गई विश्व बैंक की रिपोर्ट कहती है कि जिस दर से हम बढ़ रहे हैं, इस सदी के अंत तक पृथ्वी के तापमान में चार डिग्री सेल्सियस की बढ़ोतरी हो सकती है। और यदि ऐसा हो गया, तो उष्ण कटिबंधीय देशों में विनाश का तांडव मच जाएगा और कृषि का अधिक हिस्सा नष्ट हो जाएगा।

अभी तक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी लाने के लिए वार्ताओं के सिवाय किसी गंभीर प्रयास के साक्ष्य नहीं मिले हैं। इन गैसों के उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार औद्योगिक देश उत्सर्जन में किसी भी प्रकार की कटौती के खिलाफ हैं। दोहा जलवायु सम्मेलन, अब तक जलवायु परिवर्तन पर हुए एकमात्र वैश्विक समझौते क्योटो प्रोटोकॉल के तहत होने वाली वार्ताओं की अंतिम कड़ी है।

इस प्रोटोकॉल की अवधि 2013 की शुरुआत में खत्म हो रही है। और कहा जा

अमेरिका की देखा–देखी रूस, जापान और न्यूजीलैंड जैसे दूसरे विकसित देशों ने भी अपने उत्सर्जन में कटौती लाने से इनकार कर दिया है। इन देशों ने संयुक्त रूप से चीन और भारत को निशाना बनाया है। फिलहाल चीन विश्व में ग्रीन हाउस गैसों का सर्वाधिक उत्सर्जन करने वाला देश बन गया है और भारत में भी इसकी मात्रा बढ़ रही है।

सकता है कि इसके बाद कोई भी ऐसा वैश्विक जलवायविक समझौता नहीं है, जिसके तहत विभिन्न देशों को किसी पहल के लिए बाध्य किया जा सके। क्योटो प्रोटोकॉल के तहत औद्योगिक देशों को 2012 तक अपने उत्सर्जन में 1990 के स्तर से पांच प्रतिशत की कमी लानी थी। हालांकि ऐसा हो नहीं सका।

विकसित देश क्योटो प्रोटोकॉल के तहत किए गए मूल समझौते से पूरी तरह मुकरते हुए जिद पर अड़े हैं कि वे तब तक अपने उत्सर्जन में कटौती नहीं करेंगे, जब तक इसकी परिधि में विकासशील देशों को भी शामिल नहीं किया जाता। इन विकसित देशों की इस जिद की अगुवाई वह अमेरिका कर रहा है, जो क्योटो प्रोटोकॉल का कभी सदस्य नहीं रहा और साथ ही कुछ समय पहले तक विश्व में सर्वाधिक ग्रीन हाउस उत्सर्जित करने वाला देश भी था।

अमेरिका के नेतृत्व वाली यह मुहिम उस पर्यावरणीय सिद्धांत के ठीक उलट है, जो कहता है कि प्रदूषण फैलाने वाला ही भुगतान का पात्र होगा। कहने का मतलब है कि जिसकी वजह से पर्यावरण को नुकसान पहुंचा हो, वही उसकी भरपाई के लिए जुर्माना देगा। असल में अमेरिका ने अपने उद्योगों को नुकसान पहुंचाने वाले किसी भी वैश्विक समझौते का हमेशा विरोध किया है, भले ही पूरी दुनिया को उसकी कीमत चुकानी पड़े।

कई अमेरिकी एजेंसियां तो यहां तक कहती हैं कि स्वच्छ तकनीक और उत्सर्जन में कटौती का हवाला देकर दूसरे देश अमेरिकी अर्थव्यवस्था की गति को धीमा करने की साजिश कर रहे हैं। अमेरिका की देखा–देखी रूस, जापान और न्यूजीलैंड जैसे दूसरे विकसित देशों ने भी अपने उत्सर्जन में कटौती लाने से इनकार कर दिया है। इन देशों ने संयुक्त रूप से चीन और भारत को निशाना बनाया है। फिलहाल चीन विश्व में ग्रीन हाउस गैसों का सर्वाधिक उत्सर्जन करने वाला देश बन गया है और भारत में भी इसकी मात्रा बढ़ रही है। विकसित देशों की मांग है कि ये दोनों देश पहले अपने उत्सर्जन में भारी कटौती करें।

चीन और भारत का तर्क है कि उनका प्रति व्यक्ति उत्सर्जन अब भी विकसित देशों, खासकर अमेरिका की तुलना में काफी कम है। इसके अलावा उनका यह भी कहना है कि विकसित देश पर्यावरण को जो नुकसान पहुंचा चुके हैं, पहले उसकी भरपाई की जानी चाहिए। अपने समर्थन में विकासशील देश तर्क देते हैं कि 18वीं सदी में शुरू हुए सघन औद्योगिकीकरण के बाद से औद्योगिक देश कोयले और तेल आधारित प्रदूषणकारी उद्योगों के जरिये अब तक लगभग 375 अरब टन कार्बन वातावरण में छोड़ चुके हैं।

भारत सरकार पहले ही कह चुकी है कि जब तक औद्योगिक देश क्योटो प्रोटोकॉल की शर्तों को स्वीकार नहीं करते और उत्सर्जन के मुद्दे पर व्यापक समझौता नहीं होता, वह ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती लाने की कानूनी बाध्यता वाले किसी समझौते पर हस्ताक्षर नहीं करेगी। भारत और दूसरे विकासशील देशों को जी–77 देशों के मंच पर चीन के साथ मिलकर क्योटो प्रोटोकॉल के विस्तार और उत्सर्जन को लेकर विकसित देशों की प्रतिबद्धता की मांग करनी चाहिए।

भारत सरकार पहले ही कह चुकी है कि जब तक औद्योगिक देश क्योटो प्रोटोकॉल की शर्तों को स्वीकार नहीं करते और उत्सर्जन के मुद्दे पर व्यापक समझौता नहीं होता, वह ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती लाने की कानूनी बाध्यता वाले किसी समझौते पर हस्ताक्षर नहीं करेगी। भारत और दूसरे विकासशील देशों को जी–77 देशों के मंच पर चीन के साथ मिलकर क्योटो प्रोटोकॉल के विस्तार और उत्सर्जन को लेकर विकसित देशों की प्रतिबद्धता की मांग करनी चाहिए। इन देशों को साथ मिलकर विकसित देशों के किसी भी असंगत प्रस्ताव का विरोध करना चाहिए।

विकसित देश क्योटो प्रोटोकॉल के तहत किए गए मूल समझौते से पूरी तरह मुकरते हुए जिद पर अड़े हैं कि वे तब तक अपने उत्सर्जन में कटौती नहीं करेंगे, जब तक इसकी परिधि में विकासशील देशों को भी शामिल नहीं किया जाता। इन विकसित देशों की इस जिद की अगुवाई वह अमेरिका कर रहा है, जो क्योटो प्रोटोकॉल का कभी सदस्य नहीं रहा. . .

यूएनएफसीसीसी में जी–77 के जरिये अपनी मांग रखते हुए भारत को दक्षेस और आसियान देशों के साथ क्षेत्रीय सहयोग की नई दिशाओं की भी तलाश करनी चाहिए। विकासशील दुनिया के एक बड़े हिस्से की बेहतरी और ग्लोबल वार्मिंग के दानव पर नियंत्रण रखने वाली यूएनएफसीसीसी प्रक्रिया पर दबाव बढ़ाने के लिए क्षेत्रीय समझौतों को हथियार बनाने की रणनीति कारगर साबित हो सकती है। ❑

ग्रामीण क्षेत्रों में पर्यटन केन्द्रों की स्थापना

आजकल प्राचीन समय से चले आए ग्रामीण मेलों, धार्मिक कार्यक्रमों तथा परम्परागत सामाजिक आयोजनों में ग्रामीणों की उपस्थिति लगातार कम हो रही है। इसलिए ग्रामीणों के लिए उपयोगी नए अन्वेषणों का पर्याप्त प्रचार नहीं हो पा रहा है। मनोरंजन/पर्यटन केन्द्र ग्रामीण क्षेत्र के किसान, मजदूर, छात्र, छोटे उद्यमी तथा व्यापारियों को बड़ी संख्या में जुटाने का एक प्रभावी माध्यम बन सकता है।

■ अरविन्द जैन

खुदरा क्षेत्र में विदेशी निवेश का प्रवेश पूरे देश के आर्थिक क्षेत्र में भय का माहौल बना रहा है। इसे भूमण्डलीकरण के नाम पर स्वदेशी अर्थव्यवस्था – अस्मिता स्वातंत्र्य तथा नीतियों पर भारी चोट के रूप में देखा जा रहा है।

केन्द्र सरकार द्वारा विदेशी दबाव के तहत बहुराष्ट्रीय कंपनियों के सामने घुटने टेकने का यह एक सटीक उदाहरण है। करोड़ों की संख्या में देश के खुदरा क्षेत्र के छोटे–छोटे व्यापारी–व्यवसायी–दुकानदार –सेवा प्रदाता तथा लघु कुटीर उद्योगों को चलाने वालों के सामने रोजगार या जीवन यापन का गंभीर संकट पैदा होने की संभावना है। लेकिन इस समस्या से संघर्ष के लिए एक उपयोगी समाधान है।

हमारा देश एक कृषि/ग्राम प्रधान देश है तथा देश की 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या अभी भी ग्रामीण/अर्द्धग्रामीण या छोटे/मझोले कद के शहरों में निवास करती हैं। इन क्षेत्रों में खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य उपायों के साथ–साथ मनोरंजन/पर्यटन केन्द्रों की स्थापना भी एक प्रभावी उपाय साबित हो सकता है।

ग्रामीण क्षेत्र इस नई विद्या से लगभग अछूता है तथा ग्रामीण क्षेत्रों में पर्यटन केन्द्रों की स्थापना से न केवल मनोरंजन क्षेत्र का विस्तार होगा अपितु ग्रामीणों के लिए रोजगार के नए अवसरों की वृद्धि, जीवन स्तर में सुधार, शिक्षा, चिकित्सा, सफाई, मितव्ययिता तथा परिवहन आदि के स्वदेशी मानदण्डों के प्रति जागरूकता भी पैदा की जा सकती है।

प्रदेश में जिलेवार या दो–तीन जिलों का संकुल बनाकर किसी धार्मिक/ऐतिहासिक/पुरातात्विक महत्व के स्थान को केन्द्र बनाकर या ग्रामीणों की आसान पहुंच के अनुसार किसी स्थान पर कुछ हेक्टेयर कृषि के लिए अनुपयुक्त जमीन को विकसित कर नौकायन एवं तैराकी हेतु तालाब (इससे पेयजल समस्या के समाधान के साथ–साथ आसपास के क्षेत्रों में भू–जल तथा जंगल की वृद्धि से पर्यावरण रक्षा भी होगी) झूले, देशी फूडस्टॉल्स, स्वदेशी उपभोक्ता सामग्री की दुकानें रोजगार के नए अवसरों की वृद्धि करेंगे तथा स्थाई/अस्थाई प्रदर्शनियों के द्वारा रासायनिक खाद की जगह जैविक कृषि, कम पानी में सिंचाई के स्वदेशी साधनों, देशी बीजों तथा नई प्रजातियो का प्रयोग, सौर ऊर्जा, दुधारू पशुओं का पालन, गौ उत्पादों की उपादेयता, संतुलित एवं परंपरागत आहार के द्वारा कुपोषण से लड़ाई, देशी एवं सस्ती चिकित्सा पद्धति के द्वारा स्वास्थ्य रक्षा तथा आवश्यकतानुसार उपयोगी तथा क्षेत्रानुकूल फसलों का उत्पादन आदि के बारे में जानकारी दी जा सकती है।

साथ ही ग्रामीण खेलकूद प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया जा सकता है साथ ही इन केन्द्रों पर स्थानीय लोकभाषा, लोकगीत तथा लोककलाओं के प्रोत्साहन कार्यक्रम द्वारा स्वदेशी का प्रचार भी किया जा सकता है।

आजकल प्राचीन समय से चले आए ग्रामीण मेलों, धार्मिक कार्यक्रमों तथा परम्परागत सामाजिक आयोजनों में ग्रामीणों की उपस्थिति लगातार कम हो रही है। इसलिए ग्रामीणों के लिए उपयोगी नए अन्वेषणों का पर्याप्त प्रचार नहीं हो पा रहा है। मनोरंजन/पर्यटन केन्द्र ग्रामीण क्षेत्र के किसान, मजदूर, छात्र, छोटे उद्यमी तथा व्यापारियों को बड़ी संख्या में जुटाने का एक प्रभावी माध्यम बन सकता है।

स्थानीय देशी उत्पादों के लिए स्थानीय बाजार निर्माण के द्वारा बड़े शहरों के बहुराष्ट्रीय रिटेलर्स का मुकाबला प्रभावी ढंग से हो सकता है। इन केन्द्रों की स्थापना के लिए स्वदेशी समर्थक राज्य सरकारें, स्वयंसेवी संगठन (एन.जी.ओ.) तथा विभिन्न एजेंसियों और निजी कार्पोरेटर्स को भी आकर्षित किया जा सकता है।

कृषि उपकरण जैसे जैविक खाद तथा कीटनाशक देशीबीज तथा अन्य ग्रामीण उपभोक्ता सामग्री का निर्माण करने वाली देशी कंपनियां इस कार्य को हाथ में लेकर राष्ट्रीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुधार द्वारा सम्पूर्ण राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ आधार प्रदान कर सकती है जिसका ताजा उदाहरण अभी हाल में आई वैश्विक मंदी के बावजूद भारतीय अर्थव्यवस्था का मजबूती से टिका रहना है तथा जिसका एक मात्र श्रेय हमारे खुदरा एवं लघु/मध्यम ग्रामीण व्यापारियों के असंगठित लेकिन मजबूत नेटवर्क को दिया जा सकता है। हमारी ग्रामीण मजबूत ग्रामीण अर्थव्यवस्था में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को संकट के समय मजबूत आधार प्रदान कर देश को मंदी से बचाया अतः अब हमारा कर्तव्य है कि हम ग्रामीण क्षेत्र में भी आधुनिक स्वदेशी सुविधाओं का जाल बिछाकर राष्ट्र निर्माण में उनकी भागीदारी का सम्मान करें। ❑

आम आदमी को कब मिलेगी सस्ती दवाईयाँ

सन 1979 में 347 प्रकार की दवाएं दवा कीमत नियंत्रण आदेश के अंतर्गत आती थी और देश में दवाएं आम आदमी की पहुंच में रहती थीं। 1987 तक आते–आते इस आदेश के तहत आने वाली दवाओं की संख्या 142 रह गई और 1995 में यह मात्र 76 ही रह गई। आज मात्र 74 दवाओं की कीमत सरकारी नियंत्रण में है, जो कुल दवा क्षेत्र का मामूली–सा हिस्सा ही है। जाहिर है, दवाओं की कीमतों को नियंत्रण मुक्त करने से ये दवाएं महंगी होकर आम आदमी की पहुंच से बाहर होती गई।

■ डॉ. अश्विनी महाजन

आजकल सरकारी हल्कों में एक बहस छिड़ी हुई है कि आगामी दवा नीति में दवाओं की कीमतों के निर्धारण का फार्मूला क्या हो? यह फार्मूला लागत आधारित हो या बाजार आधारित? फार्मूला लागत आधारित होगा तो दवा की कीमतें कम हो जाएंगी और ग्राहकों की जेब की कीमत पर कंपनियों की अंधाधुंध कमाई पर अंकुश लगेगा, लेकिन अगर यह फार्मूला बाजार आधारित होगा तो कंपनियों के लाभ ऊंचे होंगे, लेकिन दवाएं महंगी होंगी। इस नीति पर फैसला जल्द किया जाना है।

गौरतलब है कि सरकारी हल्कों में यह हलचल इसलिए नहीं हो रही कि सरकार की ओर से स्वयं ऐसी कोई कवायद शुरू की गई थी। सच्चाई तो यह है कि सुप्रीम कोर्ट में एक जनहित याचिका की सुनवाई में न्यायालय की ओर से यह हिदायत सरकार को दी गई थी कि वह जल्द से जल्द आवश्यक दवाओं की सूची में शामिल उन 348 दवाओं की कीमत निर्धारण की नीति बनाए।

यह जनहित याचिका ऑल इंडिया ड्रग एक्शन नेटवर्क नाम की संस्था ने दायर की थी, जिसमें उसने सरकार को यह हिदायत दिए जाने की मांग की थी कि वह आवश्यक दवाओं की कीमतों पर नियंत्रण लागू करे। पिछले करीब 30 वर्षों से भी अधिक समय से दवा कंपनियों के दबाव में दवा कीमत नियंत्रण कानून का दायरा धीरे–धीरे घटाया गया।

सन 1979 में 347 प्रकार की दवाएं दवा कीमत नियंत्रण आदेश के अंतर्गत आती थी और देश में दवाएं आम आदमी की पहुंच में रहती थीं। 1987 तक आते–आते इस आदेश के तहत आने वाली दवाओं की संख्या 142 रह गई और 1995 में यह मात्र 76 ही रह गई। आज मात्र 74 दवाओं की कीमत सरकारी नियंत्रण में है, जो कुल दवा क्षेत्र का मामूली–सा हिस्सा ही है। जाहिर है, दवाओं की कीमतों को नियंत्रण मुक्त करने से ये दवाएं महंगी होकर आम आदमी की पहुंच से बाहर होती गई।

कई बार डॉक्टरों को प्रलोभन देकर ये कंपनियां अपनी महंगी दवा की बिक्री को बढ़ाने की कोशिश भी करती हैं। जब ऑल इंडिया ड्रग एक्शन नेटवर्क की जनहित याचिका के कारण सुप्रीम कोर्ट ने भारत सरकार को आदेश दिया कि सरकार आवश्यक दवाओं की कीमत नियंत्रण हेतु नीति की घोषणा करे तो सरकार की ओर से कृषि मंत्री शरद पवार की अध्यक्षता में मंत्रियों का एक समूह गठित किया गया।

हालांकि देश में जेनरिक दवाएं बनाने वाली कंपनियों के बीच प्रतिस्पर्धा होने के कारण छोटे निर्माताओं द्वारा कीमतें काफी कम रखी जाती हैं, लेकिन बड़ी कंपनियों द्वारा कीमतें ऊंची रखी जाती हैं। ऐसे में दवा नियंत्रण कानून का दायरा घटने से दवाओं की कीमतें आमतौर पर काफी अधिक हैं। इस बीच नया पेटेंट कानून भी लागू हो गया और अब नए पेटेंट वाली दवाएं बनाने के लिए अनिवार्य लाइसेंसिंग कानून का प्रावधान समाप्त हो गया, जिसके चलते अब दवा उत्पादन में पेटेंट धारक कंपनियों का एकाधिकार स्थापित हो गया।

एक ओर एकाधिकार के चलते नई दवाओं की ऊंची कीमतें और दूसरी ओर दवा नियंत्रण कानून में ढिलाई से आवश्यक जैनरिक दवाओं की कीमतों में वृद्धि के फलस्वरूप देश में दवाएं आम आदमी की पहुंच से बाहर हो गई। वर्ष 1995 से सरकार द्वारा दवा कीमत नियंत्रण को 74 दवाओं तक सीमित करने के कारण कंपनियों को जरूरी दवाओं के दाम बढ़ाने की खुली छूट मिल गई।

यदि दवाओं के बाजार भाव देखें तो एफडीसी कंपनी लोकप्रिय एंटी बायोटिक दवा सिपरोफलोक्सिन 39 रुपये प्रति गोली बेचती है तो यही दवा रेनबैक्सी 98 रुपये में बेचती है। इसी तरह ब्रेस्ट कैंसर के लिए लैट्रोजोल नाम की दवा बायोकैम कंपनी मात्र 99 रुपये प्रति गोली के हिसाब से बेचती है, जबकि यही दवा नावरेतिस कंपनी 1815 रुपये में बेचती है। ऐसे तमाम उदाहरण हमारे सामने है, जिसमें समान दवाओं की कीमतों में 100 प्रतिशत से लेकर 3,000 प्रतिशत तक अंतर होता है।

कई बार डॉक्टरों को प्रलोभन देकर ये कंपनियां अपनी महंगी दवा की बिक्री को बढ़ाने की कोशिश भी करती हैं। जब ऑल इंडिया ड्रग एक्शन नेटवर्क की जनहित याचिका के कारण सुप्रीम कोर्ट ने भारत सरकार को आदेश दिया कि सरकार आवश्यक दवाओं की कीमत नियंत्रण हेतु नीति की घोषणा करे तो सरकार की ओर से कृषि मंत्री शरद पवार की अध्यक्षता में मंत्रियों का एक समूह गठित किया गया।

बता दें कि वर्ष 2011 में 348 आवश्यक दवाओं की एक सूची की घोषणा की गई थी। इन दवाओं से सामान्य तौर पर उपयोग होने वाली 652 दवाओं का फार्मूलेशन तैयार होता है। इसके अलावा अन्य प्रकार की दवाओं से मिलकर लगभग 7,000 प्रकार का फार्मूलेशन इनसे तैयार होता है। मौजूदा समय में देश में जिन 74 दवाओं को दवा नियंत्रण कानून के दायरे में रखा गया है, उनकी कीमत लागत आधारित फार्मूले से तय होती है।

इससे पूर्व 1979 में भी जिन 347 दवाओं को कीमत नियंत्रण के दायरे में रखा गया था, उनकी कीमत भी लागत आधारित फार्मूले से ही तय होती थी। शरद पवार की अध्यक्षता में जिस मंत्री समूह को दवा कीमत नियंत्रण की नीति तैयार करने का काम सौंपा गया, उसने एक नए प्रकार के फार्मूले का सुझाव दे डाला। इस फार्मूले को कीमत आधारित फार्मूला कहा जा सकता है। इस फार्मूले के अनुसार हर दवा की कीमत 1 प्रतिशत से अधिक बाजार का हिस्सा रखने वाले ब्रांडों की कीमत के औसत से निर्धारित की जाएगी। इसमें उस ब्रांड को ज्यादा अहमियत दी जाएगी, जिसका बाजार हिस्सा ज्यादा होगा।

हालांकि दवा कंपनियां ऊपरी तौर पर इस फार्मूले का और यों कहें कि किसी भी प्रकार के कीमत नियंत्रण का विरोध कर रही हैं, लेकिन वे इस बात से खुश हैं कि कीमत नियंत्रण का यह फार्मूला लागत आधारित नहीं है। बता दें कि 348 दवाओं पर दवा नियंत्रण लागू हो जाने से 29,000 करोड़ रुपये की बिक्री वाली ये आवश्यक दवाएं, जो कुल घरेलू बाजार का 60 प्रतिशत है, अब कीमत नियंत्रण के दायरे में आ जाएंगी।

दवा कंपनियों का कहना है कि इसके लागू हो जाने से उनकी आमदनी 15 से 17 प्रतिशत घट जाएगी, लेकिन अगर ध्यान से देखा जाए तो इस दवा कीमत नियंत्रण के लागू हो जाने से दवाओं की कीमतें लगभग वही रहेंगी। हो सकता है कि कुछ कंपनियां जो पहले काफी अधिक कीमत पर दवाएं बेच रही थीं, उन्हें अब मामूली घटाना पड़े।

सुप्रीम कोर्ट में जनहित याचिका दायर करने वाले ऑल इंडिया ड्रग एक्शन नेटवर्क का कहना है कि इस बाजार कीमत आधारित दवा कीमत नियंत्रण की नीति से आम जनता को कोई राहत नहीं मिलेगी और इस कानून से दवाओं की ऊंची कीमतों को कानूनी जामा पहना दिया जाएगा। वित्त मंत्रालय को भी मंत्री समूह के इस फैसले से गहरा ऐतराज है।

वित्त मंत्रालय का कहना है कि दवा कीमत नियंत्रण कानून पहले की भांति लागत आधारित ही होना चाहिए। यदि लागत आधारित फार्मूला दवाओं की कीमतों के निर्धारण में लागू किया जाता है तो उससे आम लोगों को बड़ी राहत मिलेगी, लेकिन कंपनियां वित्त मंत्रालय के सुझाव को न मानने के लिए दबाव बना रही हैं। वे तर्क देती हैं कि लागत आधारित फार्मूले से भारत का उच्च स्तरीय दवा उद्योग प्रभावित होगा और दवा कंपनियां घरेलू बाजार में बेचने के बजाय विदेश का रुख कर लेंगी। ❑

रपट

4 दिसम्बर 2012

सेवा में, महामहिम राष्ट्रपति महोदय भारत सरकार, नई दिल्ली

विषय : खुदरा व्यापार में प्रत्यक्ष विदेशी पूँजी निवेश की अनुमति पर रोक लगाने के संदर्भ में

द्वारा :– उपायुक्त महोदय, पुर्वी सिंहभूम, जमशेदपुर

महामहिम,

निवेदन है कि भारत सरकार नें खुदरा व्यापार के क्षेत्र में 51 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी पूँजी निवेश की अनुमति दे दी है। भारत में प्रत्यक्ष रूप से इस व्यापार में लगभग 5 करोड़ लोग जुडे हुए हैं जिन पर आश्रितो की संख्या जोड़ दिया जाये तो आज 25 करोड़ लोगों की जिन्दगी इस क्षेत्र के सहारे बसर हो रही है। खुदरा व्यापार क्षेत्र का आज देश के कुल सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 15 प्रतिशत का योगदान है।

खुदरा क्षेत्र में विदेशी कम्पनियों के आने से केवल भारत के व्यापार पर असर नही होगा बल्कि 25 करोड़ लोगों का जीवन यापन सीधे प्रभावित होगा। साथ साथ छोटे किसान और परिवहन क्षेत्र में लगे छोटे परिचालकों का रोजगार भी नहीं बच पायेगा। कृषि उपज के खरीद क्षेत्र में एकाधिकार जमाने के बाद विदेशी कम्पनियॉ यूरोप एवं अन्य देशों की तरह यहॉ के किसानो का भी शोषण करेगी। यही हाल उपभोक्ताओं का भी होगा। छोटे व्यापारियों को समाप्त करने के बाद ये कम्पनियाँ ग्राहकों से मनमाना दाम वसूलेगी। उपरोक्त सभी तथ्यों को देखते हुए लगता है कि खुदरा व्यापार में 51 प्रतिशत प्रत्यक्ष पूँजी निवेश की अनूमति जो भारत सरकार द्वारा दी गई है वह जनविरोधी एवं देश हित के विरूद्ध है।

अतः महामहिम से अनुरोध है कि खुदरा व्यापार के क्षेत्र में सरकार द्वारा दी गयी अनुमति पर रोक लगाकर व्यापारियों, किसानो और उपभोक्ताओ के हितो की रक्षा की जाए। धरना को संबोधित करते हुय स्वदेशी जागरण मंच के पूर्वोतर संघर्ष वाहिनी प्रमुख बंदे शंकर सिंह ने कहा की चूंकि भारत खुदरा व्यापार का बड़ा बाजार है इस लिए खुदरा क्षेत्र की बड़ी कंपनियॉ वाल्मार्ट, टेस्को कैरिफोर इत्यादि का नजर भारत पर था और कांग्रेस सरकार ने उन कंपनियों को भारत लाने में मदद कर रही है। इन कंपनियों के आने से भारत में 25 करोड़ लोगों के रोजी छीन जाएगी और बेरोजगारों की एक बड़ी फौज खड़ी हो जायेगी जो अब तक इन खुदरा क्षेत्र में लगे होने के चलते रोजगार संपन्न थे।

राष्ट्रीय परिषद सदस्य मनोज कुमार सिंह ने कहा की सरकार की जो दलीलें एफड़ीआई के पक्ष में दिये जा रहे है वह सारी कोरी कल्पना है। चाहे युवाओं के रोजगार की दलीलें हो या कृषक के हित में दिया जाने वाला दलील हो सब कोरा बकवास है। जबकि सच्चाई इसके परे है। ये कमपनियॉ जहां भी गई है उन देशों का इतिहास देखने से साफ पता चल जायेगा की सच्चाई क्या है। धरना को भारतीय मजदुर संघ के प्रदेश अध्यक्ष जयनारायण शर्मा ने भी संबोधित किया। धरना के संचालन राजकुमार साव तथा धन्यवाद ज्ञापन जिला संयोजक जेकेएम राजू ने किया। आज के इस धरना कार्यक्रम में प्रमुख रूप से श्री बंदेशंकर सिंह, मनोज कुमार सिंह, जेकेएम राजु, अनिल राय,सी. पी. सिंह, राजकुमार साव, गौरव शंकर, राकेश पाण्डेय, आशुतोष राय, राघवेन्द्र सिंह, देव कुमार, रामेश्वर प्रसाद, अभय सिंह, पंकज सिंह, जयन्त श्रीवास्तव इत्यादि अनेक कार्यकर्ता उपस्थित थे।

एफडीआई के खिलाफ बुद्धि-शुद्धि यज्ञ

एफडीआई के खिलाफ विरोध प्रदर्शन देश में हो रहा है। उत्तर प्रदेश (लखनऊ) में भी व्यापारियों और स्वदेशी जागरण मंच (उत्तर प्रदेश) के तत्वावधान में प्रांत सम्पर्क प्रमुख अनुपम कुमार श्रीवास्तव एवं प्रांत महिला प्रमुख नीरा सिन्हा वर्षा के नेतृत्व में खुदरा व्यापार में एफडीआई के विरोध में एक विशाल धरना प्रदर्शन एवं पुतला दहन का कार्यक्रम 6 दिसम्बर को किया गया। स्वदेशी जागरण मंच के कार्यकर्ताओं न कहा कि खुदरा क्षेत्र में एफडीआई के आने से देश का खुदरा कारोबार तबाह जा जाएगा। धरना प्रदर्शन में स्वदेशी जागरण मंच के महानगर के संयोजक बलवीर सिंह, जिला संयोजक जय बाबू श्रीवास्तव, प्रेम नारायन शर्मा, गणेश गिरि, संजय गुप्ता, मनोज श्रीवास्तव, रवि प्रसाद, सुमेर चन्द्रपाल, धनंजय सिंह तोमर और सैकड़ों कार्यकर्ताओं के साथ धरना प्रदर्शन किया। इसके अलावा अखिल भारतीय उद्योग व्यापार मण्डल के नेतृत्व में एफडीआई के विरोध में केन्द्र बुद्धि शुद्धि यज्ञ का आयोजन जीपीओ पार्क में किया गया। जिसमें सैकड़ों व्यापारियों ने केन्द्र को एफडीआई पर सद्बुद्धि लाने के लिए आहूतियां डाली।

स्वदेशी जागरण मंच (झारखण्ड)

एफडीआई के विरोध में समाहरणालय पर धरना प्रदर्शन

विदेशी निवेश से न केवल व्यापारियों को नुकसान होगा बल्कि किसानों को भी भारी नुकसान होगा। — ज्ञानदेव टुडू

खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश (एफडीआई) के विरोध में स्वदेशी जागरण मंच गोड्डा (झारखण्ड) जिला इकाई के तत्वावधान में स्थानीय समाहरणालय के प्रवेश द्वार पर 4 दिसम्बर को धरना–प्रदर्शन किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि मंच के प्रांत सहसंयोजक राकेश कुमार उपाध्यय ने कहा कि सरकार देश की जनता के साथ धोखा कर रही है।

उन्होंने कहा कि वर्तमान राष्ट्रपति जी जब वर्ष 2011 में वित्तमंत्री थे तो उन्होंने संसद में सरकार की ओर से वचन दिया था कि इस मुद्दे पर देश के सभी दलों से सर्वसम्मति बनाकर इस निर्णय को लागू किया जाएगा, लेकिन सरकार ने बिना किसी से चर्चा किए इसे लागू करके अपना वचन तोड़ दिया है।

वालमार्ट ईस्ट इंडिया कंपनी का बदला हुआ नाम है जो भारत में विदेशी पूंजी निवेश कर देश की अर्थव्यवस्था को तहस–नहस कर यहां के व्यापार को अपने हाथों में लेना चाहता है तथा देश को एक बार फिर गुलाम बनाने की कोशिश में है।

उन्होंने वालमार्ट को चेतावनी देते हुए कहा कि यह निर्णय देश की जनता को अंधेरे में रखकर कपटपूर्ण तरीके से लिया गया है।

वालमार्ट को उनके बैंकों से मनमाना ऋण मात्र दो प्रतिशत वार्षिक ब्याज पर दिया जाता है जबकि भारत के दुकानदार अपनी पूंजी अथवा अपने मित्रों से कर्ज लेकर व्यापार करते हैं। उन्होंने सरकार से मांग की है कि केन्द्र सरकार यह बताए कि देश के सरकारी बैंकों ने भारतीय दुकानदारों व व्यवसायियों को कितना ऋण दिया है।

राष्ट्रीय परिषद सदस्य ज्ञानदेव टुडू ने कहा कि खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश से न केवल व्यापारियों को नुकसान होगा बल्कि किसानों को भी भारी नुकसान होगा। देश में बीज पर विदेशी कंपनियों का नियंत्रण बढ़ता जा रहा है व घरेलू बीज समाप्त होते जा रहे हैं।

अमरनाथ (जिला संगठक) ने एफडीआई को भारत के लिए खतरा बताते हुए कहा कि देश के खाद्य वितरण तंत्र को विदेशी कंपनियों के हवाले करना देश की सुरक्षा के लिए खतरा उत्पन्न करना है। मंच की राष्ट्रीय परिषद् सदस्या उषा जायसवाल ने कहा कि एफडीआई से छाटे–छोटे लघु उद्योगों की कमर ही टूट जाएगी। परिणामस्वरूप भारत में बेरोजगारी की संख्या बढ़ेगी।

मंच का संचालन मंच के जिला संयोजक प्रमोद ओझा कर रहे थे। धरना प्रदर्शन में स्वदेशी जागरण मंच के जिला सह संयोजक मौसम ठाकुर, देवराज सिंह, राजेश झा, अजय चौबे, गुलशन जी, पप्पू मंडल, नंदलाल राम, नकुल साह, पंकज सिंह, भूषण साह, काली मंडल, विभाग संयोजक विष्णु सिंह, निरंजन सिंह आदि ने भी अपने विचार रखें। धन्यवाद ज्ञापन निरंजन सिंह जिला संरक्षक भारतीय मजदूर संघ ने किया। ❑

एफडीआई के विरोध में किया पुतला दहन

एफडीआई से देश के साढ़े चार करोड़ खुदरा व्यापारियों के रोजगार पर संकट खड़ा हो जाएगा और उनसे जुड़े परिवारों के पचीस करोड़ लोगों के सामने भुखमरी का संकट पैदा हो जाएगा किसानों को भी दीर्घकाल में नुकसान होगा। — अरुषेन्द्र शर्मा

दिनांक 8 दिसम्बर को स्वदेशी जागरण मंच भोपाल के कार्यकर्ताओं द्वारा एफडीआई का पुतला दहन कर केंद्र सरकार के प्रति आक्रोश व्यक्त किया। प्रातः 10 बजे स्वदेशी जागरण मंच के विभाग संयोजक अरुषेन्द्र शर्मा के नेतृत्व में कार्यकर्ता बोर्ड आफिस चौराहा पर एकत्र हुए। यहां से विरोध करते हुए वहीं पर पुतला दहन किया। इस मौके पर विभाग संयोजक अरुषेन्द्र शर्मा नें कहा कि एफडीआई एक ऐसा विषैला डंक है जिस के लागू होने से भारत में खुदरा व्यापारी और किसान मरणासन्न हो जाएगा।

उन्होंने कहा कि खुदरा व्यापार में एफडीआई से देश के साढ़े चार करोड़ खुदरा व्यापारियों के रोजगार पर संकट खड़ा हो जायेगा और उनसे जुड़े परिवारों के पचीस करोड़ा लोगों के सामने भुखमरी

का संकट पैदा हो जायेगा किसानों को भी दीर्घकाल में नुकसान होगा। जिस एफडीआई की केंद्र सरकार हिमायती है, उसे इंग्लैंड, अमेरिका जैसे राष्ट्रों ने नकार दिया है। इन देशों ने भी इसके लागू होने से व्यापार ठप होने की बात कही है। स्वदेशी जागरण मंच ने मांग की कि केंद्र सरकार तत्काल एफडीआई को वापस ले। भारतीय व्यापारियों और किसानों को नष्ट होने से बचाए।

उन्होंने कहा कि केंद्र सरकार विदेशी निवेश को लेकर विदेशियों के हाथों बिक चुकी है। इसे भारतीय खुदरा व्यापारी और किसान कतई बर्दाश्त नहीं करेगा। इस दौरान दीपक पोरवाल , राजेंद्र शुक्ल, गणेश दुबे, डॉ वी.एम. ठाकुर, आर. के. मिश्र, अभिषेक तिवारी, अजित दुबे, गणेश सिंह, मनीष राजपूत, और बड़ी संख्या में स्वदेशी जागरण मंच के कार्यकर्ता मौजूद रहे। ❑

एफडीआई के विरोध में इलाहाबाद में भी पुतला दहन

स्वदेशी जागरण मंच (काशी प्रांत) के कार्यकर्ताओं ने 4 दिसम्बर 2012 को सिविल लाइन्स सुभाष चौराहा पर एफ.डी.आई. का पुतला फूंका। इस दौरान कार्यकर्ताओं ने 'एफ.डी.आई बिल वापस लो' के नारे भी लगाए।

कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए मंच के राष्ट्रीय परिषद् सदस्य और काशी प्रान्त के सह संयोजक डॉ निरंजन सिंह ने कहा कि खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश की अनुमति देश की संप्रभुता को गिरवी रखने के सामान है। उन्होंने कहा कि एफडीआई की अनुमति से खुदरा व्यापार में लगे बारह करोड़ लोग बेरोजगार हो जायेंगे। केंद्र की संप्रग सरकार बहुराष्ट्रीय कंपनियों को न्योता देकर देश को गुलामी की ओर फिर से ले जाना चाहती है। काशी प्रांत के बौद्धिक प्रकोष्ठ प्रमुख डॉ.बी. के सिंह ने कहा कि सरकार देश की अर्थव्यवस्था को बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हाथों गिरवी रखना चाहती है। पुतला दहन कार्यक्रम में जिला संयोजक अजय सिंह सह संयोजक गंगाराम गुप्ता,विनोद कुमार सिंह ,अखिलेश श्रीवास्तव,विक्रम सिसोदिया,अजीत श्रीवास्तव,सतीशचन्द्र राइ,धर्मेन्द्र कुमार सिंह,प्रेम नारायण शर्मा,राममूर्ति विश्वकर्मा व शकरानंद आदि शामिल थे। ❑

एफडीआई के विरोध में चितौड़गढ़ में धरना

रिटेल में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के विरोध में 5 दिसम्बर को स्वदेशी जागरण मंच ने चितौड़गढ़ के कलेक्ट्रेट चौराहा पर धरना देकर प्रदर्शन किया। धरने का नेतृत्व करते हुए विभाग संयोजक लालूराम कुमावत ने कहा कि एफडीआई से देश का विकास नहीं बल्कि विनाश होगा। खुदरा व्यापारी आत्महत्या करने पर मजबूर हो जाएंगे। इस निर्णय से देश में करीब 25 करोड़ लोग बेरोजगार हो जाएंगे। 1995 से 2011 तक देश में वैसे ही दो लाख 90 हजार किसान आत्महत्या कर चुके हैं। यदि रिटेल में एफडीआई हुई तो यह दर बढ़ जाएगी। सह जिला संयोजक श्यामलाल धाकड़ ने कहा कि रिटेल में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से देश एक बार फिर आर्थिक गुलामी की ओर बढ़ जाएगा। सह संयोजक नरेन्द्र व्यास ने कहा कि रिटेल में एफडीआई को कभी स्वीकार नहीं किया जाएगा। स्वदेशी जागरण मंच इसके खिलाफ सतत संघर्ष जारी रखेगा। तहसील संयोजक पवन बैष्णव पारसोली, इंद्रपाल पोरवाल, पंचायत प्रमुख नरेन्द्र केमार जोशी ने भी संबोधित किया। धरने में शिवलाल, शौकीन कुमार बजरंगलाल, बालमुकुंद, कमलेश, सुनील विनोद, अंबालाल, और सकड़ों किसान एवं व्यापरीयों ने भी हिस्सा लिया। ❑

श्रद्धांजलि : शहीद बाबू गेनू

शहीद बाबू गेनू सईद एक ऐसा दीवाना था जो महात्मा गांधी जी के आह्वान पर आत्माहुति के लिए भी तैयार था। कांग्रेस पार्टी को चार आने देने वाला यह एक सामान्य सदस्य था बाबू गेनू, जिसका पंजीयन क्रमांक था – 8194। देश के अनेक मजदूरों में से एक सामान्य मजदूर। 'स्वदेशी और बहिष्कार' के आंदोलन ने उसे झकझोर कर रख दिया था। परिणामस्वरूप वह इस आंदोलन में सक्रिय था। 'स्वदेशी और बहिष्कार' के राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह में वह भी सहयोगी बना। 12 दिसम्बर, 1930 को सुबह 11 बजे मुंबई के न्यू हनुमान रोड पर विदेशी कपड़ों से भरी हुई लॉरी के सामने वह लेट गया। अंग्रेज सार्जेंट ने लॉरी उसके सिर के ऊपर से गुजार दी। जिंदगी की अंतिम सांसे गिनते हुए और डॉक्टरों की लाख कोशिश के बाद भी शाम 4.40 बजे बाबू गेनू स्वर्गस्थ हो गए। बाबू गेनू का हरेक वर्ष 12 दिसम्बर को राष्ट्रभक्त नागरिकों को स्मरण करना चाहिए। स्वदेशी का स्वीकार एवं विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार' बाबू गेनू को दी जाने वाली सच्ची श्रद्धांजलि होगी।